चिंतन
जनमंगल का

IT'S ALL ABOUT
YOUR ATTITUDE

हनुमान का
न्याय मार्ग

www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

जून 2012

संस्कार हैं हमारी जीवनी शक्ति

पुरुषार्थ के द्वार पर सफलता की दस्तक

बेटियों के बिना कैसी होगी दुनिया!

Melini
LOUNGE WEAR

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

–: SPECIALISTS IN :–

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 3 अंक : 5

जून 2012, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
अशोक एस. कोठारी
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

कला एवं साज-सज्जा
महेन्द्र बोरा
(9910406059)

सलाहकार मंडल
दीपक रथ, दीपक जैन-भायंदर,
दिनेश बी. मेहता, निकेश एम. जैन,
कुशलराज बी. जैन, नवीन एस. जैन,
श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलौर,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797, 011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

चिंतन जनमंगल का

प्यार हम सभी के जीवन का आधार है। अगर हमारी मां, हमारी प्रथम शिक्षिका हमें प्यार से पाठ नहीं पढ़ाती, हमें जीवन की छोटी-छोटी बातें नहीं सिखाती तो क्या हम, आज इस स्थिति में अपने आपको पाते। प्यार में आयु, वर्ण, लिंग, रंग, जाति, धर्म, शिक्षा, राष्ट्रीयता, देश की सीमा कभी भी बाधा नहीं बनती। प्रेम की व्याख्या हो ही नहीं सकती। -गणि राजेन्द्र विजय

6	धर्म का लक्षण	वल्लभ उवाच
6	हमेशा वह कहो, जो महसूस करते हो	गेब्रियल मार्क्वेज
8	घोंसला, घर और संसार	प्रवेश सक्सेना
8	प्रभु को समर्पित संगीत	आचार्य दिव्यचेतनानंद
9	हंसते हुए जिंदगी का स्वागत करें	सुनीता नथानी
10	समाप्त होता जीवन क्षण-क्षण	त्रिलोक चंद जैन
11	क्यों कहते हैं गणेशजी को विघ्नहर्ता	पं. घनश्याम लाल स्वर्णकार
11	मन को प्रभुमय बनाओ	महायोगी पायलट बाबा
12	दान देने में पीछे मत रहें	मुनिराज हेमशिशु कश्यप रत्न
13	धर्म का वास्तविक स्वरूप पहचानें	नन्दकुमार सोमानी
13	श्रीकृष्ण सबके शिक्षक	डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन
14	कम सोचिए, स्वस्थ रहिए	डॉ. सूरज मृदुल
15	जैसा मन, वैसा जीवन	भ. व. विष्णु महाराजजी
15	घरेलू नुस्खे	स्वामी धर्मानंद
16	हनुमान का न्याय मार्ग	आचार्यश्री विद्यासागर
17	प्रभु की सोच	आचार्य शिवेन्द्र नागर
18	विराट विभूतिमयी प्रकृति	डॉ. सुनील कुमार अग्रवाल
19	गौवंश: भारतीय कृषि संस्कृति का आधार	फतहलाल गुर्जर 'अनोखा'
20	अनुपम भक्ति	आचार्य विजय वीरेन्द्र सूरि
21	धूप में छांव का अहसास कराता कोडाइकनाल	पुखराज सेठिया
22	जन्म-जन्म का साथ संभव है	डॉ. के. के. अग्रवाल
23	कर्म से बदलता है भाग्य	आचार्य सुदर्शन
26	आंख मन की साख है	आचार्य विजय नित्यानंद सूरि
27	स्वास्थ्यवर्द्धक फल बेल	डॉ. उमेशचंद्र पाण्डेय
27	प्रेक्षाध्यान: सांसों की भाषा का विज्ञान	डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'
28	जहां घरों में किवाड़ नहीं लगाये जाते	डॉ. रश्मि रेखा
29	पुरुषार्थ के द्वार पर सफलता की दस्तक	मंजुला जैन
29	घंटाकर्ण का महत्व	विनोद किला
30	भगवान स्वामिनारायण	महेन्द्रकुमार जैन 'भगतजी'
31	राष्ट्रीय पेय बन गयी है चाय	श्रीगोपाल नारसन एडवोकेट
32	स्वामी हरिदास के चमत्कार	स्वस्तिक राय
33	जीवन का अंतिम लक्ष्य सुख की प्राप्ति है	दलाई लामा
34	मंत्र कब, कहां और कैसे?	ओमप्रकाश शर्मा
35	खजुराहो की मूर्तियों में जीवंत कलाएं	डॉ. (सुश्री) शरद सिंह
36	अंतर्द्रष्टा बनें	आचार्य चंदन मुनि
37	हमें अपनी सांस्कृतिक धरोहर को बचाना है	विजेन्द्र गोयल
38	एक कला है उचित रखरखाव	सीताराम गुप्ता
39	गैस की समस्या है तो खाएं लौकी	दीपक भारती
40	It's all about your attitude	Swami Kriyananda
40	A love that is all-consuming	Swami Tejomayananda
41	Healthy mind boosts physical wellness	Acharya Mahaprajna
41	A philosophy of non-duality	Swami Ranganathananda
42	बेटियों के बिना कैसी होगी दुनिया!	मैत्रेयी पुष्पा
45	मोटापा सौंदर्य में बाधक	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
45	दैनिक जीवन में सरल उपयोगी टोटके	मुरली कांठेड़
46	संस्कार हैं हमारी जीवनी शक्ति	अशोक एस. कोठारी

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका में समाहित विषय-वस्तु का ऐसा प्रभाव होता है कि पत्रिका पाकर उसके हाथ में सुख की अनुभूति होती है। पत्रिका में विषयगत कसाव तो है ही कलेवर भी उत्कृष्ट है। हार्दिक बधाई।

–डॉ. सुनील कुमार अग्रवाल
स्वप्निल सदन, रानी बाग, सुभाष रोड
चंदौसी (मुरादाबाद)-202412 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका के अंक मुझे निरन्तर मिल रहे हैं, आभारी हूं। सभी अंकों में आध्यात्मिक, सांस्कृतिक संदर्भों पर केन्द्रित महत्वपूर्ण, ज्ञानवर्द्धक, प्रेरणादायक पठनीय सामग्री समाहित रहती है। व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में उदार, समन्वयात्मक दृष्टिकोण का व्यवहार, शाश्वत मानव मूल्यों की जीवनचर्या में प्रतिष्ठा तथा सात्विक भाव प्रधान आचरण के पुनीत ध्येय में यह मासिक पत्रिका सतत उद्योगरत है। आपके सुविचरित संपादकीय मन में स्फूर्ति भर देते हैं, आभ्यंतरिक ऊर्जा प्रदान करके आत्मिक सुख प्रदान करते हैं। आपके समस्त साहित्यिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों की सफलता के लिए हार्दिक मंगलकामनाएं।

–डॉ. वीरेन्द्र शर्मा
डी-213, इला अपार्टमेंट्स,
बी-7 वसुंधरा एन्क्लेव, दिल्ली-110096

समृद्ध सुखी परिवार फरवरी-2012 का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका देखकर एवं पढ़कर मैं चौंक गया। आप इसका कारण अवश्य जानना चाहेंगे। इसका कारण स्पष्ट है आप इस पत्रिका में जितनी भी रचनाओं को प्रकाशित किया है सब हर परिवार को सुख-समृद्धि प्रदान करता है। आलेख पर गौर करें- 'सुखी जीवन का पाथेय', 'वर्तमान में जीनेवाला सुखी', 'तुलसी प्रकृति की महान औषधि है' यह एक जड़ी-बूटी है जो जीवन को पूरी तरह सुखमय बनाती है। 'स्वास्थ्य की ओर पांच कदम', 'मानव में ही बसता है रब', 'अपने भीतर आनंद ढूंढों', 'अच्छे बीजों की तरह जरूरी है अच्छे विचार' भला ऐसी सुंदर रचनाएं पढ़कर कौनसा व्यक्ति होगा जिसे आनंद की अनुभूति और सुख-समृद्धि न मिला होगा? ऐसी सुंदर शुभचिंतक वाली पत्रिका आपने निकाली है, धन्यवाद। पत्रिका पढ़कर काफी प्रसन्नता हुई। सचमुच एक परिवार अच्छी तरह से कैसे सुखी रह सकता है इसका विवरण पत्रिका के माध्यम से आपने दिया है। इसलिए हर परिवार के लिए यह पत्रिका स्वस्थकर है।

–डॉ. सूरज मृदुल
गुरुद्वारा के सामने, रमना
मुजफ्फरपुर-842001 (बिहार)

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का नवीन अंक मिला। मुझे यह कहते हुए गौरव एवं प्रसन्नता है कि अपनी यह पत्रिका सर्वत्र प्रशंसित है। आपका संपादन विलक्षण है। धर्मगुरुओं के सद्विचार एवं महापुरुषों द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण कर निश्चित ही मंजिल तक पहुंचा जा सकता है।

–रूपनारायण काबरा
ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302021 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका निश्चय ही समाज को सुखी व समृद्ध बना रही है। आपका कुशल संपादन व प्रयास स्तुत्य है। सभी सुधी धर्मों व सम्प्रदायों को साथ लेकर चलने वाली यह आध्यात्मिक ज्योति समाज को एक प्रभावपरक दिशा दे रही है। सुसंस्कृत परिवार के लिए यह सहायक पत्रिका बन गई है। पठनीय सामग्री तो आप देते ही हैं, स्थायी बनाने का पूरा स्मरण रखते हैं, एतदर्थ मंगलकामनाएं।

–डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी
86/323, देवनगर
कानपुर-208003 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका आध्यात्मिकता से ओतप्रोत अत्यंत ज्ञानवर्द्धक है, इसमें सभी प्रकार की रचनाएं अच्छी लगती है, यह एक पारिवारिक पत्रिका के साथ-साथ रोचकता लिए संग्रहणीय है।

–कन्हैया अगनानी
413, आदर्श नगर, गीता भवन के पास
जयपुर-302004 (राजस्थान)

आपके कुशल संपादन में सकारात्मक पत्रकारिता के माध्यम से समाज के बौद्धिक, सामाजिक, चारित्रिक तथा आध्यात्मिक गुणों के विकास के लिए उल्लेखनीय ही नहीं वरन् सराहनीय प्रयास किये जा रहे हैं।

आज मानवजाति के अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न संसार का सबसे बड़ा प्रश्न है। सारा विश्व शस्त्रों की होड़, अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, पर्यावरण विनाश एवं धार्मिक विद्वेष के कारण असुरक्षित

हो गया है और एक भयंकर अनिश्चितता के दौर से गुजर रहा है। ऐसी विषम परिस्थिति में विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत की वसुधैव कुटुम्बकम् की संस्कृति द्वारा ही समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

–डॉ. जगदीश गांधी
प्रबंधक, सिटी मांटेसरी स्कूल
लखनऊ-226001 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का मई-2012 अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका का अंक-दर-अंक निखरता रूप मन को सहज ही मोह लेता है। उत्तम छपाई, नयनाभिराम मुख पृष्ठ, आकर्षक कलेवर, स्तरीय सामग्री और निर्दोष मुद्रण सभी कुछ लुभाता है। यद्यपि सभी रचनाएं श्रेष्ठ और मानव जीवन को उन्नत बनाने एवं परिष्कृत करने में सक्षम है तथापि आपका संपादकीय हर बार कोई-न-कोई सार्थक संदेश दे जाता है। गणि राजेन्द्र विजयजी का 'पाखण्ड से धर्म को बचाएं', उपाध्याय मणिप्रभसागरजी का 'मन के जीते जीत हैं' और आचार्य महाश्रमण का 'सफलता के उत्तुंग शिखर' आलेख विशेष रूप से पठनीय एवं मननीय हैं। सुंदर एवं श्रेष्ठ पत्रिका के प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई।

–ताराचंद आहूजा
4/114, एस.एफ.एस.,
अग्रवाल फॉर्म, मानसरोवर
जयपुर-302020 (राजस्थान)

इनके पत्र भी मिले-
डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम -कानपुर नगर (उप्र), **मोहनलाल मगो** -दिल्ली, **महेन्द्र कुमार जैन 'भगतजी'** -गाजियाबाद, **जनार्दन शर्मा** -सत्य सदन-पुष्कर (राजस्थान), **डॉ. टी. डी. शर्मा** -पूर्व कुलपति, बिलासपुर (म.प्र.), **कृष्ण कुमार ग्रोवर** -पूर्व सचिव संसदीय राजभाषा समिति, नई दिल्ली, **डॉ. विपिन कुमार जैन** -जेके लक्ष्मीपत विवि जयपुर (राजस्थान)।

संसद को शुद्ध सांसें मिलें

भारतीय संसद ने अपने जीवनकाल के साठ वर्ष पूरे कर लिए हैं। मूल्यवान 60 वर्ष नहीं है, बल्कि मूल्यवान यह है कि क्या संसद ने उसके 'क्षण' की कीमत को पहचाना है। लगता तो यही है कि संसद ने क्षण तो क्या वर्षों की कीमत को भी नहीं पहचाना है। दुनिया जहां क्षणों के हिस्सों में जी रही है, हमारी योजनाएं, हमारी समस्याएं वर्षों तक अनछुई पड़ी रहती है, क्योंकि संसद का मूल्यवान समय तो छोटी-छोटी बातों पर अभद्र शब्दों का व्यवहार, हो-हल्ला, छींटाकशी, हंगामा, बहिष्कार और बहिर्गमन जैसी घटनाओं में बीत जाता है। संसद को गौरवाशाली बनाने के लिये सबसे बड़ी जरूरत है कि वह संसद के एक-एक क्षण बल्कि सैकेण्ड के 100वें हिस्से को भी पहचाने और उसे कारगर, उपयोगी एवं कीमती बनाये। आदर्श एवं महान् वही होता है तो क्षण को पहचानता है, चाहे वह संस्था हो या व्यक्ति।

संसद की साठवीं वर्षगांठ के पुण्य अवसर पर पूरे संसदीय दृश्य की समीक्षा, हमें अपने अन्दर झांकने के लिए बहुत कुछ सामग्री दे रही है। आज बड़े-बड़े राष्ट्रों के चिन्तन, दर्शन व शासन प्रणाली में परिवर्तन आ रहे हैं। सत्ता परिवर्तन हो रहे हैं। अब तक जिस विचारधारा पर चल रहे थे, उसे किनारे रखकर नया रास्ता खोज रहे हैं। इन स्थितियों में हमारी संसद और लोकतंत्र की प्रणाली अक्षुण्ण है यह विशेष गौरव की बात है। 13 जनवरी 1952 को इसके पहले अधिवेशन की नींव पड़ी थी। नव-स्वतंत्र देशों में 60 वर्षों तक बिना किसी अवरोध के संसदीय लोकतंत्र का अनुसरण करने की मिसाल पूरी दुनिया में अकेले भारत की ही है। इस मौके को यादगार बनाने के लिए हमारी संसद को कुछ करना चाहिए था। उसने किया भी, लेकिन उलटे अर्थ में। हमारी संसद महान् है- का नारा लगाते हुए क्या इस स्वर्णिम अवसर को भी महान् बनाने की कोशिश की गयी? नारा लगाने से कोई महान् नहीं होता। महानता को सिर्फ छूने का अभिनय जिसने किया, वह बौना हो गया और जिसने संकल्पित होकर स्वयं को ऊंचा उठाया, महानता उसके लिए स्वयं झुकी है।

साठवीं वर्षगांठ मनाते हुए संसद में एक ऐसे कार्टून पर बहस हुई, यह बहस और उससे जुड़ी राजनीति ने संसद की गरिमा और गौरव को धुंधला ही नहीं किया बल्कि संसद के आचरण और उसकी काबिलीयत पर भी प्रश्न जड़े हैं। एक ऐसा कार्टून, जो 1949 में, यानी भारतीय संसद का पहला सत्र शुरू होने के करीब तीन साल पहले बना था। जिन दो लोगों को इस कार्टून में 'कांस्टिट्यूशन' (संविधान) नाम के घोंघे को हांकते दिखाया गया था- डॉ. भीमराव अम्बेदकर और जवाहरलाल नेहरू-वे इससे बिल्कुल आहत नहीं हुए थे। जिन शंकर पिल्लई ने यह कार्टून बनाया था, उन्हें इस देश ने सर-आंखों पर लिया। पद्मश्री, पद्मभूषण और पद्मविभूषण से सम्मानित उनका यशस्वी जीवन 1989 में, यानी अब से 23 वर्ष पूर्व समाप्त हो गया। लेकिन हमारे अभी के विद्वान और विवेकी सांसद पूरे 63 वर्ष पुराने और एनसीईआरटी की एक पाठ्य पुस्तक में अब से छह साल पहले पुनर्मुद्रित इस कार्टून से इतने आहत हुए कि उन्होंने न सिर्फ सरकार को तत्काल इस किताब को चलन से बाहर करने, बल्कि मानव संसाधन मंत्री को कहने तक मजबूर कर दिया कि वे इस कार्टून को बनाने वाले के इरादों की जांच करायेंगे। यह बहस इसलिये विडम्बनापूर्ण एवं दुर्भाग्यपूर्ण है कि शंकर्स वीकली जैसे पत्रिका के संपादक और शंकर डॉल्स म्यूजियम (गुड़ियाघर) जैसी अद्भुत परिकल्पना को साकार करने वाले शंकर पिल्लई को क्या अब दोबारा जन्म लेकर आम्बेडकर, नेहरू और संविधान से जुड़े अपने विचारों के बारे में सफाई देनी पड़ेगी?

यहां मामला कार्टून के औचित्य का नहीं, उसके प्रकाशन और पुनर्मुद्रण के काफी समय बाद उसे लेकर की जा रही राजनीति के औचित्य का है। हमें सोचना होगा कि इधर कुछ समय से हम कहीं एक चिड़चिड़े और असहिष्णु राष्ट्र में तो नहीं बदलते जा रहे हैं। कार्टूनों से लठमारी करने का सिलसिला जिस तेजी के साथ पश्चिम बंगाल से भारतीय संसद तक पहुंचा है, उसे देखते हुए अपने लोकतंत्र के मानसिक स्वास्थ्य को लेकर शक होने लगा है। पारम्परिक भारतीय बुद्धि साठ साल की उम्र को सनक के साथ जोड़ती आई है। यह मामला भी कहीं वैसा ही तो नहीं है? जीवंत एवं जरूरी मुद्दों को ताक पर रख कर जब गड्डे मुर्दे उखाड़े जाते तब देश 60 वर्ष पीछे चला जाता है, तब पुनः 60 वर्ष आगे लाने के लिए, सिर्फ 60 वर्ष ही नहीं लगते। देश के राजनेताओं में ज्यादा समझदारी आई है या दिशाशून्य हो गये हैं? मालूम नहीं। कार्टून जैसे राजनीतिक स्वार्थ के मुद्दों से हम ताकतवर बन सकते हैं, महान् नहीं। महान् उस दिन बनेंगे जिस दिन किसी निर्दोष का खून इस धरती पर नहीं बहेगा। जिस दिन कोई भूखा नहीं सोएगा, जिस दिन कोई अशिक्षित नहीं रहेगा, जिस दिन सत्ता की कुर्सी पर कोई राजा बन कर नहीं, सेवक बन कर बैठेगा। जिस दिन शासन और प्रशासन में बैठे लोग अपनी कीमत नहीं, मूल्यों का प्रदर्शन करेंगे। यह आदर्श स्थिति जिस दिन हमारे संसदीय चरित्र में आयेगी, उस दिन महानता हमारे सामने होगी।

संसद जैसी सर्वोच्च संस्था में जब किसी अनावश्यक एवं अप्रासंगिक मुद्दे को महत्व दिया जाता है तभी इस होड़ में बढ़त बनाने के लिए आरपीआई के कार्यकर्ताओं द्वारा एनसीईआरटी के एक सलाहकार रहे सुहास पलशीकर के दफ्तर पर हमला बोल दिया जाता है । क्या इसी ढंग से तय होगा अकादमिक निर्णय किस तरह से होने चाहिए? क्या संसद इससे अपने गौरवपूर्ण इतिहास को कायम रख पायेगी?

लोकसभा कुछ खम्भों पर टिकी एक सुन्दर ईमारत ही नहीं है, यह एक अरब से अधिक जनता के दिलों की धड़कन है। उसके एक-एक मिनट का सदुपयोग हो। वहां शोर, नारे और अव्यवहार न हो, अवरोध पैदा नहीं हो। ऐसा होना निर्धनजन और देश के लिए हर दृष्टि से महंगा सिद्ध होगा। यदि हमारे प्रतिनिधि ईमानदारी से नहीं सोचेंगे और आचरण नहीं करेंगे तो इस राष्ट्र की आम जनता सही और गलत, नैतिक और अनैतिक के बीच अन्तर करना ही छोड़ देगी। संसद की साठवीं वर्षगांठ आत्ममंथन का एक अवसर है, अतीत से प्रेरणा लेकर उन्नत भविष्य बनाने का संधिस्थल है। संसद के सुदृढ़ होने और उसके गौरवपूर्ण इतिहास के लिए कामना है कि उसे शुद्ध सांसें मिलें। संसद और लोकतंत्र की अस्मिता को गौरव मिले।

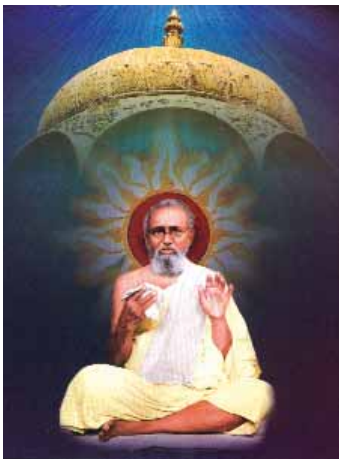

धर्म का लक्षण

आज का विषय है–'धर्म'। धर्म मानव जीवन की हर एक प्रवृत्ति को उन्नत बनाने वाला और मानव-जीवन को मर्यादा में रखने वाला है। वह मनुष्य के जीवन पथ को प्रकाशित करने वाला एक दीपक है। जिसके साथ में होने पर मनुष्य पतन के अंधेरे कुंए में गिरने से बच सकता है। उसकी जीवन यात्रा धर्मरूपी दीपक के होने से सही सलामत रहती है। मतलब यह है कि 'धर्म' जीवन के प्रत्येक चौराहे पर मानव को रास्ता दिखाता है।

व्यक्ति और समाज के जीवन का अभ्युदय और नि:श्रेयस (कल्याण) अगर कोई कर सकता है तो वह 'धर्म' ही है। दूसरे शब्दों में कहूं तो धर्म व्यक्ति और समाज के उन्नत जीवन का स्रष्टा है। जैसे प्राणों की रक्षा करने पर शरीर की रक्षा होती है, वैसे ही जीवन की रक्षा धर्मरूपी प्राणों की रक्षा से होती है। इसलिए महाभारत में कहा है– ''धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षति।'' अर्थात्– ''धर्म को नष्ट कर डालने या छोड़ देने पर वह जीवन का नाश कर डालता है और धर्म को सुरक्षित रखने पर वह जीवन की रक्षा करता है।''

वास्तव में पवित्र हृदय से गहराई में उतर कर विचार किया जाए तो सारी समाज का ही नहीं, सारी सृष्टि का आधार और दारोमदार धर्म पर ही है। धर्म के बिना व्यक्ति, समाज या विश्व टिक नहीं सकता।

धर्म का स्वरूप और महात्म्य

धर्म से यहां दुनिया में प्रचलित विविध धर्म-सम्प्रदाय, मत, मजहब, पंथ या रिलीजिन से मतलब नहीं है, अपितु अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, न्याय, नीति, संयम, तप आदि जीवन को मंगलमय और कल्याणमय बनाने वाले शुद्ध धर्मत्व से है। इसीलिए धर्ममूर्ति भगवान महावीर ने कहा–

''धम्मो मंगलमुकिट्ठं अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो।।''

यानी–अहिंसा, संयम और तप रूप शुद्ध धर्म उत्कृष्ट मंगलमय है। जिसका मन सदा धर्माचरण में लीन रहता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

यह है धर्म का स्वरूप और महात्म्य! पाव भर का छोटा-सा तुम्बा तीन मन के शरीर को नदी से परे कर देता है, वैसे ही ढाई अक्षर का छोटा-सा धर्म शब्द की आत्मा को डूबने से बचा देता है।

धर्म का लक्षण

प्रश्न होता है, भारत के प्रत्येक व्यक्ति में ताने-बाने की तरह गूंथा हुआ और खान-पान, से लेकर जन्म-मरण और चलने-फिरने आदि हर क्रिया के साथ भारतीय समाज-जीवन में लगा हुआ यह धर्म क्या वस्तु है? अगर मनुष्य धर्म का वास्तविक स्वरूप समझ ले तो वह उसे जीते जी छोड़ नहीं सकता। धर्म का लक्षण जैनाचार्यों ने किया है–

''दुर्गतौ प्रपतज्जन्तून् यस्माद् धारयते तत:।
धत्ते चैव शुभे स्थाने तस्माद् धर्म इति स्मृत:।।''

अर्थात्– जो दुर्गति (पतन के गड्ढे) में पड़ते हुए प्राणियों–आत्माओं को बचाता है और सद्गति (उन्नति के स्थान) पर पहुंचता है, वह धर्म कहलाता है।

वैदिक धर्म में भी इसी से मिलती-जुलती धर्म की व्याख्या की गई है। जो समाज को (उत्थान या कल्याण के मार्ग में) धारण करके रखता है, जो समाज का पोषण, रक्षण और सत्वशुद्धि करता है, जो समाज के जीवन में सद्विचार और सदाचार की मशाल जलाता है, वही धर्म है। जो विचार और आचार आत्मा की पवित्र शक्ति को विकसित करते हैं, वे धर्म हैं।

(साभार : वल्लभ वाणी, भाग-1)

हमेशा वह कहो, जो महसूस करते हो

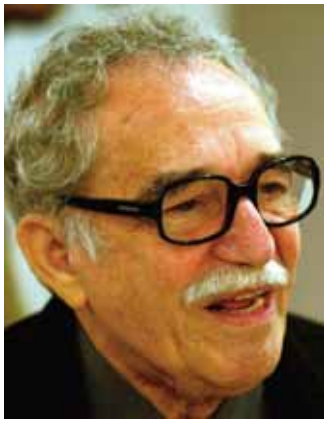

■ **गेब्रियल मार्क्वेज**

कोलंबिया के जाने-माने लेखक और पत्रकार गेब्रियल गार्सिया मार्क्वेज का जन्म 6 मार्च 1927 को हुआ था। यूं तो उन्होंने तमाम साहित्यिक रचनाएं की हैं, लेकिन उनकी सबसे पॉपुलर रचनाओं में शामिल हैं उनके उपन्यास वन हंड्रेड ईयर्स ऑफ सॉलिट्यूड और लव इन दी टाइम ऑफ कॉलरा। 1982 में उन्हें साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार से नवाजा जा चुका है।

■ यह महत्वपूर्ण नहीं है कि आपकी जिंदगी में क्या घटित होता है, महत्व इस बात का है कि आप क्या याद रखते हैं और कैसे याद करते हैं।

■ किसी बात से मिलने वाली खुशी अगर आपको ठीक नहीं कर सकती तो दवा के सहारे ठीक होने की उम्मीद बेकार है।

■ कोई ऐसा नहीं है आपकी जिंदगी में जिसके लिए आप आंसू बहाते रहें। अगर कोई है भी, तो वह आपको रोने नहीं देगा।

■ इंसान जब मां के पेट से जन्म लेता है, तभी उसका जन्म लेना तय नहीं मानना चाहिए। जिंदगी में कई मौके ऐसे आते हैं, जब आपको लगता है कि जीना तो अब शुरू हुआ है।

■ यह सच नहीं है कि लोग बढ़ती उम्र के साथ सपने देखना और उन पर यकीन करना छोड़ देते हैं। सच यह है कि लोग बूढ़े होते जाते हैं क्योंकि वे सपने संजोना और उन्हें पूरा करने के बारे में सोचना बंद कर देते हैं।

■ आप कितना भी प्यार कर लें, कुछ न कुछ प्यार के काबिल हमेशा बचा रहता है।

■ एक झूठ किसी शक से बेहतर होता है, वह प्रेम से ज्यादा उपयोगी साबित हो सकता है और सचाई से ज्यादा उम्र पा सकता है।

■ बुद्धि के साथ यही एक दिक्कत है कि जब तक बुद्धि आती है, तब तक बहुत देर हो चुकी होती है।

■ हम सब की तीन जिंदगियां होती हैं- सार्वजनिक, निजी और गोपनीय।

■ हमेशा वह कहो, जो महसूस करते हो। वह करो, जो आपकी सोच में ठीक मालमू पड़ता है।

चिंतन जनमंगल का

■ गणि राजेन्द्र विजय

प्यार एक ऐसा रसायन है जिसकी प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया से हम प्रतिक्षण प्रभावित होते रहते हैं। यह हमारे अंदर ऐसी प्रसन्नता, खुशी, स्नेह, अपनत्व, हर्ष भर देता है कि हमारे संपूर्ण शरीर का रोम-रोम पुलकित हो उठता है और वह प्रसन्नता, खुशी, हर्ष हमारे चेहरे से, हावभाव से, आंखों से, वाणी से व्यक्त हो ही जाता है। हम हरेक को उसमें सहभागी बनाना चाहते हैं, जबकि भय, कुढ़न, जलन, ईर्ष्या, विरोध, असहयोग, अप्रसन्नता, दु:ख से हम स्वयं अपना ही नुकसान करते हैं और समाज का भी।

अनुकूल परिस्थिति में प्रसन्नता एवं प्रतिकूल परिस्थिति में दु:ख का अनुभव करना मानव स्वभाव बन गया है और हम अपने स्वभाव के अनुरूप ही व्यवहार करने लगते हैं। भय, जलन, दुख, द्वेष की स्थिति में हम कुढ़ने लगते हैं, बड़बड़ाने लगते हैं, एक असुरक्षा की भावना से ग्रसित हो जाते हैं और चिड़चिड़े हो जाते हैं। स्वाभाविक है कि हमारे शरीर में उसी प्रकार के नकारात्मक रसायनों की वृद्धि होती जाएगी और हम उन्हीं रसायनों के वशीभूत होकर उसी प्रकार का व्यवहार करेंगे, जो प्रिय नहीं होगा।

प्यार बांटने की भावना के बलवती होने पर दूसरों का उपकार करने की इच्छा बलवती होने लगती है और जब हम किसी की सहायता करते हैं या उसकी इच्छापूर्ति के कार्य में, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहभागी बनते हैं तब हममें एक प्रसन्नता भर जाती है, एक पुलक हमारे तन-मन को भिगो जाती है एवं हम स्वयं भी प्रसन्नता का अनुभव करने लगते हैं, जबकि हमारे अंदर स्वार्थ की भावना होने पर किसी की उन्नति से कुढ़ने या जलने पर ईर्ष्या करने पर या मन-ही-मन किसी का अमंगल चाहने पर, हमारे शरीर में एक निराशावादी भावना का प्रवेश हो जाता है, जो हमारा स्वयं का अमंगल कर देती है।

प्यार हम सभी के जीवन का आधार है। अगर हमारी मां, हमारी प्रथम शिक्षिका हमें प्यार से पाठ नहीं पढ़ाती, हमें जीवन की छोटी-छोटी बातें नहीं सिखाती तो क्या हम, आज इस स्थिति में अपने आपको पाते। प्यार देने-लेने वालों में आयु, वर्ण, लिंग, रंग, जाति, धर्म, शिक्षा, राष्ट्रीयता, देश की सीमा कभी भी बाधा नहीं बनती। प्रेम की व्याख्या हो ही नहीं सकती। प्रेम तो समझने की, महसूस करने की, अनुभव करने की एक कला है। प्रेम क्या है, यह वर्जनीय तो है ही, इसकी शाब्दिक परिभाषा भी इतनी विविधता पूर्ण है कि लगता है इसमें ब्रह्माण्ड ही समाया हुआ है।

प्रेम बांटने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है स्वयं को भूल सकने की। हमें अपने अंदर अहंकार से मुक्ति पानी होगी तभी हम किसी से सच्चा प्यार कर सकेंगे। दुनिया की सारी संपत्ति देकर भी एक मित्र खरीदा नहीं जा सकता और न ही किसी मित्र की क्षतिपूर्ति किसी भी प्रकार की संपत्ति से की जा सकती है।

भगवान महावीर ने मैत्री की परिभाषा का एक महत्वपूर्ण सूत्र दिया है- 'किसी को भी अपना शत्रु मानो ही मत।' जब हमारा कोई शत्रु है ही नहीं, वह पहले से ही हमारा मित्र है। अगर किसी ने भी, किसी को भी, किसी भी कारण से, एक बार अपना शत्रु मान लिया है, तब फिर उस व्यक्ति के लिए यह थोड़ा मुश्किल कार्य होगा कि उसी व्यक्ति से मित्रता स्थापित कर ले। उसे इसमें सफलता मिल सकती है। अगर वह व्यक्ति अपने मन में उन विचारों को निकाल दें जो उस शत्रुता के कारण थे। परन्तु यदि हम किसी को अपना शत्रु मानेंगे ही नहीं, तब तो उस स्थिति का सामना करना ही नहीं पड़ेगा।

मैत्री का महान सूत्र है शिष्ट व्यवहार। जब कोई भी व्यक्ति शिष्ट व्यवहार करता है तो उसके सामने शत्रुता टिक ही नहीं सकती। हीरा हीरा ही रहता है अगर वह मिट्टी में गिरा हुआ है तो भी। और मिट्टी मिट्टी ही रहती है अगर वह उड़कर आसमान तक पहुंच जाती है तो भी। अन्तत: हीरे की महत्ता, उसका मूल्य नहीं घटता है और धूल-मिट्टी का कोई मूल्य रहता नहीं है। अमैत्री और शत्रुता का कारण होता है-अशिष्ट व्यवहार, जो क्रोध से उत्पन्न होता है। कई बार एकदम छोटी-सी बात पर आपे से बाहर हो जाते हैं, क्रोधित हो जाते हैं उसी क्रोध के वशीभूत होकर हम शत्रुता स्थापित कर लेते हैं।

'वसुधैव कुटुम्बकम्'-एक स्वर्णिम सूत्र। सम्पूर्ण विश्व को परिवार या कुटुम्ब मानना। यह मैत्री-भावना विशिष्टतम परिप्रेक्ष्य है। विश्व में मैत्री, इसका आधार है-विश्व में प्राणीमात्र से सद्व्यवहार और सद्व्यवहार की उत्पत्ति में निमित्तभूत होते हैं-शुभ विचार। मैत्री विकास के लिए स्नेह की, सद्भावना की, कल्याण के सोच की बड़ी आवश्यकता है।

शरीर का घाव ठीक हो जाता है परन्तु मन का घाव ठीक नहीं होता। शस्त्र का घाव भर जाता है परन्तु बातों का घाव मनुष्यों को आयुपर्यन्त सालता ही रहता है। मैत्री भावना की साधना जहां होती है वहां पर कष्ट या पर-पीड़ा का विचार नहीं आता। वहां तो सदैव कल्याण-ही- कल्याण की भावना होती है। मित्र यही सोचता रहेगा कि किस प्रकार कल्याण हो, किस प्रकार मंगल हो। वहां क्रोध नहीं होगा। वहां तो शत्रुता में भी मित्रता पनप सकती है।

मित्रता ही भाव है समर्पण का, त्याग का। मित्रता में जब तक देने की भावना विद्यमान रहती है तब तक ही वह मित्रता रहती है। जब उसमें लेने की भावना आ जाती है, जब उसमें स्वार्थ की भावना भर जाती है, तब वह मित्रता नहीं रह जाती।

शत्रुता के भाव को नष्ट कर अपने आपको बदल लेना ही यथार्थ में मैत्री है। मैत्री और शत्रुता भी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अगर शत्रुता नहीं रहेगी तो मैत्री हो ही जाएगी और अगर मैत्री है तो शत्रुता रह ही नहीं सकती। इन दोनों में से जब कोई भी एक भाव ऊपर रहेगा तो दूसरा दिखाई नहीं पड़ेगा और दूसरा अगर दिखाई पड़ रहा है तो पहला स्वत: ही दृष्टि से ओझल हो जाएगा। हमें अपनी विचारधारा में परिवर्तन लाना है कि कोई हमारा शत्रु नहीं है। दोषारोपण शत्रुता का जन्मदाता है। किसी भी कार्य की असफलता का दोष जब हम किसी पर लगाते हैं, किसी पर आरोपित करते हैं, तब हम उस व्यक्ति को अपना शत्रु बना लेते हैं। ●

घोंसला, घर और संसार

■ प्रवेश सक्सेना

घोंसले का नाम सुनते ही चीं-चीं करते नन्हें-मुन्ने चूजों का खयाल आता है, जो तिनकों से बने अपने छोटे से घर में जन्मते हैं। चिड़ा-चिड़ी दूर-दूर से दाना-पानी लाकर उन्हें पालते-पोसते हैं। एक सुरक्षित वातावरण, बढ़ने-पलने की सुविधाएं और प्यार यही सब होता है एक घोंसले में।

और यही सब एक घर में भी अपेक्षित होता है। ऐसे नन्हें से घोंसले में या एक नन्हे से घर में एक पूरा छोटा-सा संसार समा जाता है। आखिर घर, विश्व का एक लघु संस्करण ही तो है, जहां अलग-अलग स्वभाव तथा विभिन्न प्रकृति के लोग एक स्नेह के तंतु से बंधे रहते हैं। यही स्नेह भाव उन्हें एकता के सूत्र में बांधे रखता है। यजुर्वेद में एक मंत्र में आध्यात्मिक एकता के भाव को 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्' से अभिव्यक्त किया गया है। इसी के साथ 'एक विश्व' की अवधारणा भी जन्म लेती है।

आधुनिक युग में ग्लोबलाइजेशन या ग्लोबल विलेज जैसे शब्दों का प्रयोग बहुत किया जाता है। पर यह अवधारणा अर्थ और व्यापार पर आधारित है, जिसका भाव है, आप अपनी पूंजी पूरे विश्व में कहीं भी निवेश कर सकते हैं या कहीं भी किसी भी देश की वस्तुएं खरीद सकते हैं। लेकिन जहां व्यापार होता है, वहां तेरा-तेरा जरूर होता है। इसलिए ग्लोबल विलेज में वैश्विक एकता का भाव प्रस्फुटित हो ही नहीं पाता।

परन्तु वेदों में विश्व बंधुत्व का चिंतन बड़े उदात्त रूप में ऋषियों ने किया है। यही चिंतन मानवीय आदर्श के रूप में बाद के कवि, संत तथा रहस्यवादी भी अभिव्यक्ति करते रहे हैं।

यजुर्वेद (32.8) के इस मंत्र में 'रहस्यवाद' के चार सूत्र वर्णित हुए हैं। प्रथम सूत्र है संपूर्ण सृष्टि में एक परम चेतना है कि जिसकी अनुभूति की जा सकती है। ज्ञानी चिंतक इस अनुभूति का साक्षात्कार कर पाते हैं। पर यह अनुभूति या ज्ञान नीरस नहीं, शुष्क नहीं अपितु प्रेमपूर्ण होता है।

दूसरा सूत्र बताता है कि परम चेतना की अवधारणा एक रहस्य है जो गुह्य (गुफा) में छिपा रहता है। रहस्य का अनावरण करना अपने आप में एक चुनौती है और एक आकर्षण पूर्ण काम भी है। हम सबके हृदयों में या बुद्धियों में एक चैतन्य तत्व छिपा है। हम पूरा जीवन यों ही बिता देते हैं, उसका साक्षात्कार करने का प्रयास ही नहीं करते। क्योंकि हम बाहर के आकर्षण जाल में फंसे रहते हैं।

तीसरे सूत्र में उसे नन्हा-सा नाम दिया गया है 'तत्' यानी वह। वह यानी जो सार रूप है, सत्ता रूप है, सत् है। अव्यक्त सा 'वह' अनुभूति के बाद सत् हो जाता है- व्यक्त हो जाता है। इस प्रकार ओम तत् सत् एक संपूर्ण मंत्र बन जाता है, जो सृष्टि के साथ परमात्मा के व्यक्ताव्यक्त रूपों को सरलता से समझा देता है।

वैदिक ऋषि इसे सूत्र में ढालकर अत्यंत काव्यात्मक भाषा में कहता है- यत्र विश्व भवत्येकनीडम्! जहां पूरा संसार एक नीड़ या एक घोंसला बन जाता है। जैसे पक्षी घोंसले में, मनुष्य घर में समा जाते हैं- वैसे ही संपूर्ण पक्षी के घोंसले में पूरा विश्व समाया रहता है- दर्शन की रहस्यात्मकता कितनी सरलता से यहां अभिव्यक्त हो रही है।

हम सबके भीतर दिव्यता निहित है। इसको अपना लें तो सब संसार ही आत्मीयता के बंधन में बंध जाएगा। वास्तव में स्नेह भावना ही हमें एक-दूसरे से जोड़ती है। यही हमें उदार बनाती है। कहा गया है- *अयं निजः परो वेति गणनालघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।* इस श्लोक में पूरी धरती के एक कुटुम्ब होने की बात कही गई है। पर यजुर्वेद का मंत्र काव्यात्मक सौन्दर्य के साथ स्नेह भाव को रेखांकित करता हुआ उसे एक नीड़ कहता है।

मंत्र की दूसरी पंक्ति में परम तत्व को विश्व के बनने-बिगड़ने दोनों में विद्यमान बताते हुए भी एक और सुंदर रूपक दिया गया है। जैसे वस्त्र में तानाबाना इस कदर जुड़े मिले रहते हैं कि एक प्रतीत होते हैं, वैसे ही वह सत् (तत् सत्) प्रजाओं में, प्राणियों में व्यापकता से विद्यमान रहता है- ओतप्रोत रहता है। ●

प्रभु को समर्पित संगीत

■ आचार्य दिव्यचेतनानंद

आध्यात्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण का नाम ही प्रभात संगीत है। संगीत के क्षेत्र में यह एक नया घराना है। आनन्दमूर्ति यानी प्रभातरंजन सरकार ने आनन्द मार्ग की स्थापना कर अपने को सिर्फ संगीत तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि तमाम दूसरे क्षेत्रों की तरह ही संगीत में भी योगदान दिया। भाव, भाषा, छन्द और सुर की दृष्टि से यह एक अन्यतम संगीत है।

भक्ति गीत अगर आध्यात्मिक भाव से पूर्ण हो तो उसके लिए भाषा कोई बंधन नहीं रहता, इसलिए गीतकार अंग्रेजी भाषा में प्रभात संगीत देकर भक्ति गीत को सार्वभौम स्तर तक पहुंचाया है। जब भक्त परमपुरुष के प्रति समर्पण भाव व्यक्त करते हैं, प्यार करते हैं तो उस समय उनके मन में आंतरिक भाव गीतकार प्रभात संगीत के अंग्रेजी भाषा के द्वारा किस तरह से व्यक्त करते हैं।

'दिस लाईफ इज फॉर हिम।'

भक्त परमपुरुष से कहता है कि मेरे प्रियतम इस संसार में मेरे जीवन के साथ जो कुछ भी है वह तुम्हारे लिए समर्पित है। तुम हो इसलिए मेरा इस संसार में आना संभव हुआ। तुम अगर नहीं होते तो मैं इस मानव शरीर में नहीं आ पाता। तुम हो इसीलिए मेरा अस्तित्व है।

आध्यात्मिक प्रेरणा तथा ईश्वरभक्ति के साथ-साथ प्रभात संगीत सामाजिक पुनर्जागरण का भी संदेश देता है। इन गीतों में पीड़ित एवं शोषित मानवता के प्रति हार्दिक संवेदना के साथ-साथ मानवता के आंसू पोंछने का भी संकल्प है। बतौर गीतकार आनन्दमूर्ति संस्कृत भाषा में भी गीत देकर प्रभात संगीत को भावपूर्ण बनाया है।

'जीवने मरणे तोमाकेई आमि जानि।
आलोके आंधारे तोमाकेइ शधु जानि।।'

हे मेरे प्रियतम, जीवन-मरण में मैं केवल तुम्हीं को जानता हूं। प्रकाश में, अंधकार में, मैं केवल तुम्हीं को पहचानता हूं। तुम्हारे सिवा मेरे कोई अस्तित्व नहीं है। तुम हो इसलिए मैं हूं। ●

हंसते हुए जिंदगी का स्वागत करें

■ सुनीता नथानी

जब एक इंसान की मौत होती है,
कई रिश्तों की मौत होती है।
इंसान भगवान को कोसता है।
पर इसमें उसका क्या कसूर,
उसकी दी हुई जिंदगी, जब चाहे मांग ले।
हम सब उसकी अमानत!

एक इंसान हंस के मर गया, पर हजारों को रुला गया। हम उसकी मौत पर क्यों रोते हैं? क्या उसकी कमी का एहसास होता है या अपनी आने वाली मौत का डर!

अगर उस इंसान की कमी का एहसास होता है, तो कुछ वक्त के बाद हम सब उसे भूल क्यों जाते हैं। क्यों याद नहीं आता वो इंसान जिसकी मौत पर हमने हजारों आंसू बहाए। क्यों वो पल भूल जाते हैं, जब हमने उसे जान से भी प्यारा माना था। अब हम उसे भूल गए, कहीं एक कोने में जरा-सी जगह दे दी है उसे एक तस्वीर के रूप में। कुछ वक्त के बाद वो तस्वीर भी उस कोने में धुंधली-सी दिखती है।

जब एक इंसान की मौत होती है, भगवान से बार-बार पूछा जाता है, क्या यही है तेरा न्याय? लेकिन जानते सब हैं कि जिंदगी देने से पहले ही वो मौत का वक्त भी तय कर देता है। इंसान रोता हुआ आता है, और हंसता हुआ जाता है। आती हुई जिंदगी का स्वागत हम हंसते हुए करते हैं, पर रोते हुए उसे विदा करते हैं। जब कोई पैदा होता है, तब रोना चाहिए और हंसते हुए उसे विदा करना चाहिए, क्योंकि असली घर तो वहीं है।

जिन्दगी का सबसे बड़ा उसूल बनाएं, हंसते हुए जिन्दगी का स्वागत करें और हंसते हुए ही उसे विदा करें। हर रिश्ते का एक वक्त होता है, वक्त में वह बनता है और वक्त खत्म होने पर रिश्ता भी खत्म हो जाता है।

जब एक रिश्ता टूटता है तो बहुत दुख होता है। वो दुख क्यों? वो इसलिए क्योंकि रिश्तों के साथ-साथ हमारी उम्मीदें भी बढ़ने लगती हैं। उससे जो मिलता है, उससे हम संतुष्ट नहीं होते। हम चाहते हैं कि हर पल वह रिश्ता वैसा रहे, जैसा उस पल में हम उसे चाहते हैं। उम्मीद तोड़ना इंसान की फितरत है।

रिश्ता चाहे पति-पत्नी का हो, भाई-बहन का या दोस्त का- उन दोनों में से कोई एक कमजोर होता है और दूसरा ताकतवर। कमजोर और ताकतवर सेहत से नहीं, सोच से। कमजोर अपने को ताकतवर के सामने हमेशा गलत ही समझता है, चाहे वो सही भी हो।

लेकिन जो खुद का कमजोर होना स्वीकार कर लेता है, वह दिल से बड़ा होता है। अपने को छोटा या कमजोर या गलत मान लेना आसान नहीं होता। जो खुद को ताकतवर मानता है, वह घमंडी होता है, उसकी सोच छोटी होती है। समझदारी इसी में है कि अपने से कमजोर किसी को मत समझो।

अच्छे संस्कारों वाला सबसे अमीर व्यक्ति, बुरे कर्मों वाला सबसे बड़ा गरीब। जैसा होने से कोई अमीर या गरीब नहीं बनता। इसलिए गरीब और अमीर वही प्यारा है, जो सच्चे दिल से, सच्ची भावना से अपने कर्म करता है। सबको एक जैसा समझो। घमंड और झूठ से सौ कोस दूर रहो।

देना सीखो और लेना भूल जाओ। देकर कभी जताओ नहीं, लेने के लिए कभी सताओ नहीं। कम बोलो, धीरे बोलो, पर अच्छा बोलो। ज्यादा सोचो, पर अच्छा सोचो। बुरा मत सुनो, सबकी सुनो, पर अपने मन की करो। सच्चाई का साथ दो, ईश्वर तुम्हारा साथ देंगे।

दूसरे का दिल कभी मत दुखाओ। सेवा का भाव हमेशा अपने मन में रखो। किसी को अपना दुख मत सुनाओ, दुख बढ़ता है। अपनी खुशियां बांटो, वे और बढेंगी। सच्ची भावना से दुख-तकलीफ उस ईश्वर पर छोड़ दो, जिसने दिया है, वही उसका हल भी निकालेगा।

चाहे वो बुरा वक्त हो या अच्छा, उसका शुक्र अदा करो, क्योंकि जीवन की हर घड़ी उसी की दी हुई है। जीवन को प्रसाद समझ कर उसे ग्रहण करो, तो सब मीठा-ही-मीठा लगेगा। यदि कुछ मांगना हो तो यह मांगों कि हे प्रभु! मुझे सब्र करने की शक्ति देना। ●

समाप्त होता है जीवन क्षण-क्षण

■ त्रिलोक चंद जैन

देवगति बड़ी विचित्र होती है। संसार का अंधकार मिटाने वाले सूर्य और चन्द्र को भी ग्रहण लगता है। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है, हमारी आयु भी कम होती जाती है। लोग समझते हैं कि हम बड़े हो रहे हैं, पर हकीकत यह है कि हम हर दिन छोटे हो रहे हैं। उर्दू के एक शायर ने जीवन की नश्वरता के विषय में कहा है। आगाज के दिन ही अंजाम तय हो चुका है। संसार में भी सभी प्राणी मुसाफिर की तरह हैं। कुछ समय के लिए एक जगह टिके हुए हैं। सभी को एक न एक दिन यहां से चल देना है। फिर धन, मकान आदि के लिए किसी से व्यर्थ में क्यों झगड़ना? यह शरीर अनित्य है और उसे नष्ट हो जाना है। जब जिन्दगी मिली है तो मौत भी एक दिन आनी है।

मौत आंधी की तरह आती है, जिंदगी फिर नहीं बच पाती है। मुझे आदत है घर बदलने की, मौत बदनाम हुई जाती है। असल में हम सभी मुसाफिर हैं। जहां जिसका स्टेशन आ गया, वहां उसे उतरना ही पड़ेगा। श्रीरामचरित मानस के अयोध्या कांड में भी लिखा है- 'काहु न कोउ सुख दु:ख कर दाता। निजकृत भोग सब भ्राता।' अर्थात् कोई किसी को सुख दु:ख देने वाला नहीं है। सब अपने ही कर्मों का फल भोगते हैं। जीव अकेला ही जन्मता है, अकेला ही मरता है तथा अकेला ही अपने कर्मों का फल भोगता है। पाश्चात्य विद्वान बायरन का विचार है- 'स्वयं काटकर जीर्ण म्यान को दूर फेंक देती तलवार। इसी तरह चोला अपना यह देता है जीव उतार।।'

भर्तृहरि ने कहा है- जिस प्रकार फूटे हुए घड़े में से एक-एक बूंद पानी टपकता है, उसी प्रकार मनुष्य का जीवन भी क्षण-क्षण में समाप्त होता चला जाता है। भगवान महावीर ने कहा है कि जिस प्रकार ओस की बूंद बहुत कम समय के लिए किसी जगह पर ठहरती है और किसी भी समय पतन हो सकता है, उसी प्रकार मनुष्य का जीवन भी किसी भी क्षण नष्ट हो सकता है।

"मनुष्य जीवन की उपमा एक दीपक से दी गई है। देखते ही देखते जिस तरह तेल कम हो जाने से दीपक बुझ जाता है, उसी प्रकार वह भी (मनुष्य का जीवन) बुझ जाता है।"

अत: क्षण भर के लिए भी प्रमाद न करो। आदि शंकराचार्य ने भी कहा है- 'मा कुरु धन-जन-यौवन गर्वम्। हरित निमेषात् काल: सर्वम्।।' यानी धन, जन, यौवन का गर्व मत करो। काल क्षणमात्र में सब कुछ नष्ट कर देता है। धम्मपद में लिखा है- पुत्र मेरा है, धन मेरा है, इस प्रकार की बातों को सोचकर मूर्ख मनुष्य दु:खी होता है। जब स्वयं उसका शरीर ही उसका अपना नहीं, तो कहां पुत्र और कहां धन? वृक्ष का पीला पत्ता जमीन पर गिरता हुआ अपने साथी पत्तों से कहता है कि आज जैसे तुम हो, एक दिन हम भी ऐसे ही थे और आज जैसे हम हैं, एक दिन तुम्हें भी ऐसा ही होना है।

मनुष्य जीवन की गति के बारे में श्रीरामचरित मानस में लिखा है- जैसे जल से भरे हुए समुद्र की ओर नदी जाती है, उधर से लौटती नहीं। उसी तरह सांसारिक संबंध सर्वथा क्षणिक होते हैं। मानस के अयोध्या कांड में भगवान राम के वनवास का उल्लेख करते हुए लिखा है- 'रामचंद पति सो बैदेही, सोवत महि विधि बाम न केही। सिय रघुवीर कि कानन जोगू। करम प्रधान सत्य कह लोगू।।' अर्थात्, जिसके पति श्रीरामचंद्र जी है, वह जानकी आज जमीन पर सो रही है। विधाता किसको प्रतिकूल स्थिति में नहीं डालता। सीताजी और श्रीरामचंद्र क्या वन में रहने योग्य हैं? लोग सच कहते हैं कि कर्म (भाग्य) ही प्रधान है।

मनुष्य जीवन की उपमा एक दीपक से दी गई है। देखते ही देखते जिस तरह तेल कम हो जाने से दीपक बुझ जाता है, उसी प्रकार वह भी (मनुष्य का जीवन) बुझ जाता है। महाभारत का प्रसंग है। जब वीर अभिमन्यु की मृत्यु हुई, तो उसके बारे में कहा गया- 'मातुलो यस्य गोविन्द:, पिता यस्य धनंजय:। अभिमन्यु वर्धं प्राप्त: कालस्य कुटिला गति:।।'

यानी श्रीकृष्ण जिसके मामा थे और अर्जुन जिसका पिता, उस अभिमन्यु का भी वध हुआ है। काल की गति कुटिल है, अर्थात् इसे समझना कठिन है। राजतरंगिणी में कल्हण ने लिखा है, समय आए बिना वज्रपात होने पर भी मृत्यु नहीं होती और समय आ जाने पर पुष्प (फूल) भी प्राणी के प्राण ले लेता है।

-बी.जे.-105, शालीमार बाग (पश्चिमी), दिल्ली-110088

जीने की कला

- मनुष्य का जीवन अमूल्य है। उसमें असीम संभावनाएं छिपी होती है। दरअसल, किसी भी क्षण को दुबारा नहीं जिया जा सकता है, इसलिए जीवन जीने की कला आनी चाहिए।
- जीवन में वर्ष जोड़ने के बजाय वर्षों में जीवन डालना चाहिए। अर्थात् लम्बा नीरस जीवन जीने की अपेक्षा जीवन चाहे छोटा ही क्यों न हो, लेकिन जीवंत हो।
- दिल, मन या आत्मा कुछ भी कहें, उस पर यदि कोई बोझ रहता है, तो वह जीवन को नीरस बना देता है।
- हम अपने जीवन में जितना कुछ बांटते चले जाते हैं, उससे कहीं अधिक पा जाते हैं और जो कुछ संजोकर रखते हैं, उससे हाथ धो बैठते हैं।
- सुख और दुख को ईश्वर का प्रसाद समझकर समान आदर देना चाहिए।
- मनुष्य अपनी अक्ल को सबसे अच्छा मानने के कारण अपने विकास का मार्ग अवरुद्ध कर लेता है।
- कभी-कभी मनुष्य अपनी भावनाओं, वासनाओं में बहकर क्षण भर में ऐसी भूल कर बैठता है, जिसका खामियाजा उसे जिंदगी भर भुगतना पड़ जाता है। अत: जीवन में पग-पग पर सजग रहें।
- यदि हममें कोई कमी है और हम उसे खुले तौर पर स्वीकार कर लेते हैं, तो उसका कुप्रभाव कम से कमतर होता है।
- हमारे भाव ज्यों के त्यों हमारे विचारों में नहीं आ सकते। साथ ही, विचार ज्यों के त्यों शब्दों में नहीं भरे जा सकते हैं। सुनने वाले, पढ़ने वाले पुन: शब्दों के अर्थ अपने-अपने ढंग से लिया करते हैं।

-डॉ. यू. सिंह संतोषी

क्यों कहते हैं गणेशजी को विघ्नहर्ता

■ पं. घनश्याम लाल स्वर्णकार

सिद्धि विनायक गणपति विघ्न विनाशक, सुख-समृद्धि के दाता देवताओं में अग्रगण्य पूज्य हैं। सिद्धि विनायक गणपति की प्राण प्रतिष्ठा कर घर में अपने पूजा स्थान में रखकर नित्य पूजा करने मात्र से घर में धन की वृद्धि होने लगती है। गृहस्थ के कई विघ्न, बाधाएं दूर करने तथा अभिलाषित प्राप्तियों के लिए सिद्धि विनायक गणपति के मंत्रों को विधिनुसार जाप करने से साधक को अभीष्ट फलों की प्राप्ति होती है।

कन्या के विवाह के लिए: कन्या के विवाह में अनावश्यक विलम्ब दूर करने हेतु वह कन्या सिद्धि विनायक गणपति पर 'ॐ हेरंब गणपतयै नमः' मंत्र के साथ प्रदक्षिणा कर नमस्कार करे। 108 दिन के नियमित प्रयोग से कन्या को शीघ्र ही सुयोग्य वर की प्राप्ति होती है।

लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए: सिद्धि विनायक गणपति की पंचोपचार से पूजा के बाद 'ॐ श्री गं सौभाग्य गणपतये वरवरद सर्वाजनं में वशमानय स्वाहा' मंत्र के नित्य एक माला के जप करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

संतान प्राप्ति के लिए: श्री गणपति की मूर्ति पर संतान प्राप्ति के इच्छुक महिला प्रतिदिन स्नानादि से निवृत्त होकर एक मास तक बिल्व फल चढ़ाकर 'ॐ पार्वती प्रिय नंदनाय नमः' मंत्र की 11 माला प्रतिदिन जपने से संतान प्राप्ति होती है।

स्वास्थ्य लाभ के लिए: एकदंत की मूर्ति के आगे घी का दीपक जलाकर 'ॐ ह्रीं ग्रीं हीं' मंत्र की प्रतिदिन 11 मालाओं के जप करने से व्यक्ति रोग मुक्त होकर शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त करता है।

दाम्पत्य सुखद बनाने के लिए: गणपति की प्रतिमा के आगे शुद्ध घृत का दीपक जलाकर नित्य 'ॐ गणप्रीति विवर्धनाय नमः' मंत्र की एक माला प्रतिदिन जप करने से पति-पत्नी का आपसी मतभेद शीघ्र दूर होकर आपसी प्रेम बढ़ता है।

सिद्धि विनायक गणपति की पंचोपचार से पूजा के बाद `ॐ श्री गं सौभाग्य गणपतये वरवरद सर्वाजनं में वशमानय स्वाहा' मंत्र के नित्य एक माला के जप करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

समृद्धि-वैभव प्राप्ति के लिए: गणपतिजी को प्रतिदिन जल चढ़ाकर 'ॐ ऐश्वर्यदाय नमः' मंत्र की प्रतिदिन 11 मालाओं के जप करने से शीघ्र समृद्धि एवं वैभव की प्राप्ति होती है।

साक्षात्कार में सफलता के लिए: गणाध्यक्ष की प्रतिमा पर दूब चढ़ाकर प्रतिदिन 'ॐ गुणप्राज्ञाये नमः' मंत्र की माला का जप करने से साक्षात्कार में प्रायः निश्चित ही सफलता मिलती है।

व्यापार में वृद्धि के लिए: अपने प्रतिष्ठान पर गणपतिजी की प्रतिमा की स्थापना कर प्रतिदिन धूप-दीप के साथ हरे मूंग चढ़ाकर 'ॐ विष्णुप्रियाय नमः' मंत्र की एक माला जाप किया करें। व्यापार में आश्चर्यजनक प्रगति होती जाएगी।

परीक्षा में सफलता में प्राप्ति के लिए: परीक्षा में सफलता के लिए सिद्धि विनायक गणपति के आगे घी का दीपक जलाकर नित्य एक माला 'ॐ गुणप्रवणवर्धनाय नमः' मंत्र का नियमित जाप करने से कामयाबी की संभावनाएं बढ़ जाती है।

सर्वसिद्धि प्राप्ति के लिए: गणपतिजी की नित्य पूजा-अर्चना कर गणपति के अष्टोत्तरशतनामावली के नित्य पाठ करने से मनुष्य को सर्वसिद्धि प्राप्त हो जाती है।

सौभाग्य वृद्धि के लिए: गणपतिजी की प्रतिमा पर प्रतिदिन पुष्पमाला चढ़ाकर 'ॐ गजाननाय नमः' मंत्र की एक माला जप करने से सर्व प्रकार के सुख-सौभाग्य की वृद्धि होती है।

कार्यसिद्धि हेतु: गजानन की नियमित विधि-विधान से पूजा करके लड्डुओं के साथ 'ॐ मोदक प्रियाय नमः' मंत्र के जप करने से मनवांछित कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है।

शत्रुनाश के लिए: समुखाय पर 'ॐ विघ्नराजाय नमः' मंत्र की 11 मालाओं का नित्य जाप करें। ●

मन को प्रभुमय बनाओ

■ महायोगी पायलट बाबा

यह मन बहुआयामी है। अगर इसे साथ कर लो तो यह महान बना देता है और अगर इसको महत्वहीन समझकर अपने मद से झुठलाने की कोशिश करो, तो यह धोखा देता है। इसलिए इस मन को प्रभुमय बनाओ। गुरु की कृपा का पात्र बनाओ। यह मन शरीररूपी मंदिर का एक महत्वपूर्ण पुजारी है। यह परमात्मा तक जाने के मार्ग पर बैठा है। यह सभी योगियों की गुफा द्वार का पहरेदार है। यह मन कभी खाली नहीं बैठता है। मन ही मनुष्य की पहचान है। यह मन ही अगर रास्ता दे दे, तो जीवन के सारे प्रश्न अर्थहीन हो जाएं।

मन कभी इंतजार नहीं करता है। यह हमेशा जल्दी में रहता है। इसे आराम पसंद नहीं, धैर्य पसंद नहीं। यह अपने ही काम में व्यस्त है, इसे गति पसंद है। इसे क्रियाशीलता पसंद है। यह हमेशा सवाल पर सवाल पैदा करता है। इसे उन सवालों का उत्तर पाने की भी प्रतीक्षा नहीं होती है। उसे तो केवल प्रश्न ही करना है। इसलिए तुम्हें इसे समझने के लिए संयम चाहिए। इसकी गतिविधियों को पकड़ने के लिए द्रष्टा भाव चाहिए। समय के महत्व को जानना होगा। तुम कितना तैयार हो, तुममें कितनी क्षमता है, तुममें कितनी जागृति है- इस मन को पकड़ने के लिए। यह मन ही तुम्हारे मनुष्य होने की पहचान है। यह मन ही संसार है। इसी से तुम्हें मुक्त होना है। तुम्हारे जगत के विकास के और विस्तार में चार चांद लगाने वाला यह मन ही है। आरामदायक, आनंदमय बनाने के पथ में जितनी भी दुर्लभ खोज हुई है- वे सब मन के कारण ही हुई हैं। अगर तुम इस मन को समझ लो, अगर तुम इसे अपने अनुकूल बना लो, तो यह तुमको तुमसे मिला देगा। ●

दान देने में पीछे मत रहें

■ **मुनिराज हेमशिशु कश्यप रत्न**

अनुकूले विधौ देयं यत पूरपिता हरिः।
प्रतिकूलै विधौ देयं यतः सर्व हरिष्यति।।

अर्थात् जब भी भगवान की कृपा हो तब दान दिया जाए क्योंकि धनदाता भगवान ही होता है। पर यदि भगवान की कृपा न हो तो भी दान देना ही चाहिए। ऐसा न करने पर भगवान रूष्ट होकर सब कुछ छीन लेते हैं।

दान का महत्व अनूठा है। अतः हमें दान देने में कभी पीछे नहीं रहना चाहिए। जब भगवान सा दाता देने वाला है तब भला कम होने का प्रश्न ही नहीं उठता है। मानव को दान में मन को छोटा नहीं करना चाहिए। प्रकृति का यह अटल नियम है कि आप जितना देंगे उतना ही आपको भी मिलेगा। धन की देवी दान अनुसरणीय है। अर्थात लक्ष्मी भी दान का अनुसरण करती है।

एक राजा था। वह बड़ा ही दानी था। विद्वानों और श्रेष्ठ कलाकारों को वह उदारता से पुरस्कृत करता तथा उनको सम्मानित करता। प्रजा के कष्ट निवारणार्थ वह दिल खोलकर पैसा देता। इसी कारण उसके राज्य की प्रजा सुखी थी और राज्य के सभी साधु, संत और ब्राह्मण बड़े संतुष्ट थे। पर राजा के प्रधानमंत्री को राजा की उदारता, हृदय विशालता बड़ी अखरती। अतः यदा-कदा जब भी उसे मौका मिलता वह राजा को दान करने में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बाधाएं पैदा करता रहता। परन्तु राजा की उदारता के कारण वह निराश था, कुछ कर नहीं पाता था।

राजा को सचेत करने को मंत्री ने मौका देखकर उसके शयन कक्ष की दीवार पर लिखवाया 'आपदार्थ धन रक्षते' अर्थात आपत्ति काल के लिए धन संचय करना चाहिए। राजा ने सूत्र पढ़ा और मन ही मन मंत्री के अज्ञान पर हंसा और उसने तुरंत उक्त सूत्र के नीचे लिखवाया 'महतांकृत आपदा' अर्थात् बड़े व्यक्तियों को आपत्ति क्यों आएं?

मंत्री राजा का सूत्र पढ़कर आश्चर्यचकित हुआ। उसने मन-ही-मन विचार किया कि राजा संभवत यह सोचता होगा कि उसे विपत्तिकाल का

शास्त्रों में धन की तीन गतियां बताते हुए लिखा है, 'दानं भागै नाशः तिस्थ गतथः भवन्ति तितस्थ, याने दर्धाते न मुक्ते तस्थतृतीयः गति भर्वति।' पैसा जब तक हाथ में हो तब तक ही उसे अपना मानना चाहिए। यदि हाथ के पैसे को विवेक से सद्कार्यों में व्यय किया जाता है तो जन्म-जन्मान्तर तक इसके पुण्य का फल अवश्य मिलेगा।

सामना कभी नहीं करना होगा। अतः उसने राजा के सूत्र के नीचे लिखवाया 'कदाचित कुपितो देवः' अर्थात् संभवतः देव ही कुपित हो जाए तो? क्योंकि जीवन में विपत्तियां अवश्य आती हैं। राजा ने मंत्री की पंक्ति पढ़कर उसके नीचे लिखवाया 'संचित चापि नश्यति' अर्थात देव के कुपित होने पर संचित धन भी नष्ट होता है। उक्त दृष्टांत से मेरे कथन की पुष्टि होती है। अतः मानव को दान देने से कभी मुंह नहीं मोड़ना चाहिए। क्योंकि यदि भगवान अनुकूल हो तो देकर कभी वापिस नहीं लेगा पर यदि वह प्रतिकूल हो तो दिया भी नष्ट हो जायेगा। दिया हुआ व्यक्ति को पुनः मिलता ही है जब रखा हुआ तो स्वतः ही नष्ट हो जाता है। अतः व्यक्ति को अनुकूल तथा प्रतिकूल दोनों ही परिस्थितियां में दान अवश्य करना चाहिए।

शास्त्रों में धन की तीन गतियां बताते हुए लिखा है, 'दानं भागै नाशः तिस्थ गतथः भवन्ति तितस्थ, याने दर्धाते न मुक्ते तस्थतृतीयः गति भर्वति।' पैसा जब तक हाथ में हो तब तक ही उसे अपना मानना चाहिए। यदि हाथ के पैसे को विवेक से सद्कार्यों में व्यय किया जाता है तो जन्म-जन्मान्तर तक इसके पुण्य का फल अवश्य मिलेगा। वैसे लक्ष्मी बड़ी चंचल होती है। यह आज तक भी किसी के पास स्थायी नहीं रही है।

पूज्य गुरुदेव युवा हृदय सम्राट हेमंत सूरी का कथन है कि लक्ष्मी भगवान विष्णु की अर्धांगिनी है। विष्णु अर्थात व्यापक। इस कारण वह विशाल, उदार हृदय वाले व्यक्ति को छोड़कर अन्यत्र नहीं जाना चाहती है। वैसे कंजूस उदार नहीं होता है। क्योंकि वह न तो किसी को खिलाता ही है और न ही किसी का खाता है। वह सब कुछ यहीं छोड़कर सदा के लिए चला जाता है। दूसरी ओर दानवीर बड़ा दक्ष होता है क्योंकि वह अपने धन को सद्कार्यों में लगाता और सद्कार्यों को पुण्य में परिवर्तित करके अपने साथ में ले जाता है। जो खुद भी खाये और दूसरों को भी खिलाता है, उसे प्रतिष्ठा, सम्मान मिलता है।

अनुवादः शिवचरण मंत्री
–श्रीनगर, अजमेर-305025

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध हैः
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

धर्म का वास्तविक स्वरूप पहचानें

■ नन्दकुमार सोमानी

प्रत्येक प्राणी का व्यक्तित्व उसके कर्मेन्द्रियों व ज्ञानेन्द्रियों से बना है। ज्ञानेन्द्रियों से संसार का आभास होता है और जीव कर्मेन्द्रियों से उसके अनुरूप अपना काम करता है।

संसार सूक्ष्म व स्थूल वस्तुओं से बना है, मानव का व्यक्तित्व भी। प्रत्येक स्थूल वस्तु को सूक्ष्म से ही नियंत्रित अथवा चलित किया जा सकता है। जैसे आपका शरीर मन या बुद्धि के आदेश से आइसक्रीम खाने बाजार में जाए और वांछित कर्म हो जाने पर वापस लौट आए।

इस प्रकार योग व प्राणायाम शरीर के विभिन्न अंगों को लचीला व पुष्ट बनाते हैं, लेकिन वे व्यायाम के अतिरिक्त और कुछ फल नहीं दे सकते। क्योंकि मन व बुद्धि इन क्रियाओं से सूक्ष्म हैं, उनका असर या लाभ सूक्ष्म अंगों पर नहीं हो सकता।

इसलिए योग व प्राणायाम को धार्मिक व आध्यात्मिक क्रिया बताना गलत है। यह वैसे ही जैसे तीर्थयात्री श्रद्धा से ऋषिकेश-हरिद्वार से तांबा के पवित्र पात्र में भर लाते हैं, लेकिन वह गंगाजल मानवीय प्रदूषण से कहां मुक्त होता है। गंगा किनारे बसी सारी बस्तियां अपना सारा कचरा गंगा माता के ही हवाले करती हैं।

मेरा अनुमान है कि हमारे देश में दस-पन्द्रह लाख गेरुआधारी साधु-संन्यासी होंगे। यदि वे एक-एक गांव में जाएं और गंगा, कावेरी, गोदावरी जैसी पवित्र नदियों में बस्तियों का मलमूत्र न जाने देने का अभियान चलाएं- वे स्थानीय श्रद्धालुओं और अधिकारियों के सहयोग से सब जगह सेप्टिक टैंक वगैरह बनवाएं और भक्तों को नदी और पर्यावरण की सफाई (और मन की भी) का बताएं तो कितनी बड़ी सेवा हो। वे उन गांवों में जाएं जहां लोग एक-दूसरे के

धर्म के यांत्रिक कर्मकांडों से तीर्थयात्रा बेहतर है, जहां कम-से-कम प्रभु की मूर्तियों के दर्शन तो होते हैं।

खिलाफ सालों जर-जायदाद का मुकदमा लड़ते हैं और वहां आपस में मेल-मिलाप करवाएं, अपनी सेवा से माहौल बेहतर बनाएं, तो इस समाज या देश का कितना भला हो जाए।

गंगा का धार्मिक महत्व उसके उपमा-अलंकार में है। वह अध्यात्म के रूप में आकाश गंगा में बहती है, जिसे मोक्ष के लिए भगीरथ पृथ्वी पर लाए, पर शिव की जटाओं से और वहां से बूंद-बूंद गिरकर वह आत्मबोध की नदी बन जाती है। तात्पर्य यही है कि आध्यात्मिक ज्ञान किसी सिद्ध गुरु से ही मिलता है, वह भी साधक की शक्ति के अनुसार। गुरु नीलकंठ है, वह संसार के रागद्वेष के हलाहल से मुक्त है। पर साधारण भक्त यह सब नहीं समझ सकता।

इसीलिए प्राथमिक स्तर पर ईश्वर की आराधना माला फेरने, तीर्थ यात्रा करने और व्रत-उपवास आदि से शुरू की जाती है। आम आदमी के लिए यही पर्याप्त है और नितान्त स्वार्थपूर्ण व अहं जनित जीवन से बेहतर है। ये सारे कर्मकाण्ड (यज्ञ-जप-समेत) शरीर की क्रियाओं से किए जाते हैं, हालांकि भावना साथ रखी जाती है। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि कर्मकाण्ड के महत्व व मीमांसा को समझे बिना उसे यांत्रिक रूप से करने का कोई लाभ नहीं (देखें अध्याय 12 श्लोक 12)।

इसलिए धर्म के यांत्रिक कर्मकांडों से तीर्थयात्रा बेहतर है, जहां कम-से-कम प्रभु की मूर्तियों के दर्शन होते हैं। इससे अधिक सूक्ष्म गिरिजाघरों में मोमबत्ती जलाकर प्रभु को अर्पण करने और मंदिरों में आरती करने की क्रिया है। ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियों से सूक्ष्म हैं, अतः ये साधन आपको थोड़ा और आगे ले जाते हैं। तीर्थ में भी देवता के गुणों व उपदेशों को प्रसाद के माध्यम से स्वीकार कर अपने जीवन में यथाशक्ति ढालना होता है। तभी उस यात्रा का कोई लाभ है।

मन को प्रभु की भक्ति और बुद्धि को अध्यात्म में लगाना निर्गुण उपासना है, जो उपरोक्त साधनों से बेहतर व सूक्ष्मतर है। निर्गुण अपने अंदर व्याप्त आत्मा को वासनाओं व कामनाओं से दूर करने का प्रयास है जिसे कर्म, भक्ति व ज्ञानयोग के माध्यम से किया जाता है। अन्ततः साधक की वह स्थिति आ जाती है कि वह पत्तों के हिलने, झरने के कलरव निनाद, फूलों के रंग, तितली के पंखों में प्रभु के विराट स्वरूप का दर्शन करने लगता है, सूर्योदय व सूर्यास्त के सौन्दर्य का तो कहना ही क्या! ●

श्रीकृष्ण सबके शिक्षक

■■ डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

धर्मग्रंथ गीता की आस्था अवतार में है। यानी किसी खास मकसद के लिए स्वयं भगवान के धरती पर आने में। लेकिन ठीक वहीं पर गीता एक और अवतार की बात कहती है- इंसान में भगवान की। ये दोनों बातें एक-दूसरे की विरोधी लगती हैं।

गुरु जो पूरी मानव जाति का आध्यात्मिक उत्थान चाहता है, वह अपने भीतर बसी पवित्र आत्मा की गहराई से बोलता है। श्रीकृष्ण का अवतार हमारे अंदर बसी चेतना का सबसे अद्भुत उदाहरण है, निराशा में बसी पवित्रता। भागवत पुराण के अनुसार 'आधी रात के घने अंधेरे में हम सब के भीतर बसने वाले भगवान देवकी घर प्रकट हुए, वे तो हर किसी के दिल में बसे हुए हैं।'

श्रीकृष्ण भगवान के जन्म का अर्थ है, रात के अंधेरे में उजाले का पैदा होना। हमारे भीतर अचानक ही एक प्रकाश पुंज का पैदा होना, जिससे जिंदगी नई और तरोताजा हो जाए। जब यह पवित्र आत्मा हमारे भीतर जन्म लेती है तो हमारी जेल के ताले अपने आप खुल जाते हैं। भगवान तो हर जीव के दिल में बसे हैं और जब उन्हें हमसे दूर करने वाला पर्दा उठ जाता है तो हमें दिव्य आवाज सुनाई देती हैं। श्रीकृष्ण का जन्म भगवान का अवतार लेना भर ही नहीं है, वह भगवान द्वारा इंसानियत को अपना लेना भी है।

गुरु अपने शिष्यों को राह दिखाता है। शिष्य अर्जुन है जिसकी आत्मा संघर्ष कर रही है और सच को स्वीकार नहीं कर पा रही है। वह अंधेरे और असत्य की ताकतों से लड़ रहा है। उसकी सीमाएं और नैतिकता उसे ऊपर उठने से रोक रही हैं। अर्जुन रथ पर सवार है लेकिन उसका सारथी श्रीकृष्ण ही उसका मार्गदर्शक है। हर कोई शिष्य है, और अगर आस्था हो तो भगवान गुरु हैं। ●

कम सोचिए, स्वस्थ रहिए

■ डॉ. सूरज मृदुल

आज इस देश में नब्बे प्रतिशत आदमी मध्यम परिवार के हैं। इसलिए ये जीतोड़ परिश्रम कर अपने परिवार के लिए दो जून की रोटी जुटा पाते हैं। फिर वे कुछ वर्तमान के लिए धन रखकर, अपने भविष्य निधि के लिए पैसा जमा करते हैं। इस हालत में ये कई तरह की बात सोचते हैं, जिससे उसका परिणाम बहुत बुरा होता है। क्योंकि आदमी को आज उतना ही सोचना चाहिए, जितना कि जरूरी है। फिर हम वर्तमान में जी रहे हैं और सोच रहे हैं आने वाले कल की? जिसका कोई अर्थ नहीं है। अगर आपका वर्तमान ही ठीक नहीं है तो भविष्य कैसे ठीक होगा? इसकी कल्पना आप अच्छी तरह से कर सकते हैं? एक प्रश्न है, चिंता बड़ी या चिता। तो इसका उत्तर है चिंता, क्योंकि यह चिता तक साथ जाती है लेकिन चिता तो केवल चिता तक ही रहती है।

एक कहानी बड़ी मशहूर है। देखे जरा, एक गरीब मजदूर था। वह दिन भर, मर-मजदूरी कर खा-पीकर, अपने सर के नीचे गमछा (तौलिया) रखकर, निश्चिंत से सो जाता था। एक बार उस राज्य का राजा भूषण देव ने, अपने मंत्री से कहा, मुझे आजकल नींद नहीं आती है लेकिन हमारे यहां काम करने वाले कई मजदूर, खूब खर्राटा मारकर सोते हैं, यह कैसे संभव है भला? यह सुनकर, उस मंत्री ने कहा, 'हुजूर ऐसा आपके साथ भी हो सकता है?'

तब वह राजा ऐसी बात सुनकर आश्चर्य में डूब गया। फिर उस मंत्री ने, एक युक्ति सोचकर, अपने राजदरबार के एक मजदूर राम विहारी को बुलवाया। फिर उसे पांच हजार रुपया, राजा की ओर से दिलवा दिया और उसे तीन महीने के बाद यह रकम लौटा देने का भी आदेश दिया। इस राम बिहारी मजदूर के पास अब पांच हजार रुपया था, इसलिए वह पैसे वाला था लेकिन इन दिनों उसकी नींद गायब हो गई थी। कारण उन पैसे को उसे सुरक्षित जो रखना था? जिसका परिणाम यह हुआ कि कल तक वह खिला-खिला रहता था, अब वह एक महीने के अंदर ही बहुत कमजोर और बीमार सा दिखने लगा था। यह देखकर राजा भूषण देव की समझ में आ गया कि आदमी के स्वास्थ्य पर चिंता या ज्यादा सोचने से कितना बुरा असर पड़ता है। फिर उसे नींद भी नहीं आती है। बाद में इस सीख से उस राजा ने ज्यादा सोचने से मुक्त रहने की कोशिश की, जिससे वह भी निश्चित होकर खर्राटा भरकर सोने लगा।

आजकल अधिकतर परिवार में प्रायः देखा जाता है कि 'खाओ-पिओ और मस्त रहो' की परम्परा ही लोग ज्यादा अपनाए हुए हैं। उन्हें भविष्य के बारे में न कोई चिन्ता, न सोच रहती है। बहुत हुआ तो अपने या अपने बच्चे के नाम से दो-तीन इंश्योरेंस करा लिया या एकाद जमीन का प्लाट ले लिया बस! आज के अधिकतर परिवार, मात्र अपना नहीं तो अपने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई और उसके सुंदर व्यक्तित्व को बढ़ाने में विश्वास करते हैं। क्योंकि उन्हें यह मालूम है कि उनका अगर लड़का-लड़की अपने पैर पर खड़ा हो गया तो, ऐसा पैसा बाद में भी हमें मिल जाएगा? फिर पैसा का सही सदुपयोग, यही सब तो है! इसलिए ये लोग खूब आनंदित होकर रहते हैं। घूमते-फिरते हैं एवं खाते-पीते हैं, साथ ही साथ अपने बच्चों पर पढ़ाई-लिखाई पर खर्च भी करते हैं। वे सोचते हैं आज भला है तो हमारा भविष्य भी अवश्य भला होगा? फिर क्यों हम भविष्य के फेर में अपने वर्तमान को गवाएं। क्यों घुट-घुट कर वर्तमान को तबाह कर भविष्य के बारे में सोचे? इसलिए कुछ आधुनिक परिवार तो जी खोलकर, पैसा खर्च करते हैं। कहा भी गया है, जीओ तो ऐसे जीओ, जैसे सब तुम्हारा हो, फिर आदमी को आज ऐसे जीना भी चाहिए कि वह हर पल को, पूरी तरह चख ले। फिर यह पल दुबारा तो नहीं आने वाला?

भविष्य के फेर में हम अपना वर्तमान तबाह कर लें, यह कहां की समझदारी है? इसलिए कोई भी कार्य करें तो उसमें पूरी तरह रम जाना चाहिए, भविष्य कि चिंता इस समय बिल्कुल छोड़ देनी चाहिए। आप भी ऐसा कर देखिए न, इससे आपको कितना सुख का आभास होता है। आप यह अवश्य अनुभव करेंगे। आप खुद सोचिए न, आप किसी तीज-त्योहार को अपने पूरे-परिवार के साथ मनाते हैं। यही अगर आपके बेटी-बेटे नौकरी पर चले जाएं और आपको अकेले तीज-त्योहार मनाना पड़े तो आपको उसकी कितनी कमी खलेगी? इसलिए आज आपके घर में बेटा-बेटी, सब साथ हैं तो फिर क्यों नहीं साथ-साथ त्योहार मनाकर आनंदित हो? वैसे भी गया वक्त वापस कभी लौटकर नहीं आता है। इसलिए खूब आनंदित होकर जिए। आखिर भविष्य कि चिंता करने से क्या फायदा?

निष्कर्षतः कहने का तात्पर्य यह है कि इस मशीनी युग में आप ज्यादा न सोचिए, न ज्यादा चिंता कीजिए। इससे आपके शरीर पर बहुत बुरा असर पड़ता है, जिससे कई रोगों का जन्म होता है। फिर जिन्दगी के जीने के मायने ही बदल जाते हैं। इस कारण आप अपना वर्तमान भी खोते हैं और भविष्य भी खोते हैं। फिर चिंता में घुल-घुलकर, आप अपना स्वास्थ्य भी बर्बाद करते हैं। कहावत है न, सोचने (चिंता) से चतुराई घटती है यानी स्वास्थ्य पर उसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है और आपकी अक्ल भी मारी जाती है। इसका यह मतलब नहीं कि भविष्य के बारे में आप बिल्कुल न सोचिए, जरूर सोचिए। जब वर्तमान से पूरी तरह आप निपट जाए तब ही? नहीं तो परिवार की उन्नति को अधर में लटकाकर, आप कैसे भविष्य की चिन्ता करेंगे? अर्थात कम सोचिए, स्वस्थ रहिए।

-गुरुद्वारा के सामने, रमना
मुजफ्फरपुर-842001 (बिहार)

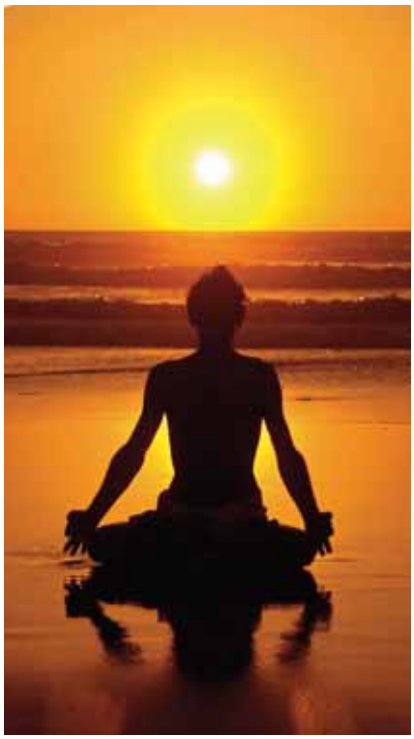

जैसा मन, वैसा जीवन

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि अंत काल में जो जैसा स्मरण करता है, उसे अगले जन्म में वैसी ही प्राप्ति होती है।

■ भ.व. विष्णु महाराजजी

भागवत पुराण के अनुसार एक राजा हुए जिनका नाम था भरत। वे बहुत ही पराक्रमी और धार्मिक राजा थे। जब उन्हें वैराग्य हुआ तो उनके मन में आया कि इस भौतिक जगत, राज्य इत्यादि में रहने से भक्ति होगी नहीं, अतः वन में जाना चाहिए। राज त्यागकर वे वन में चले गये। एक कुटिया बनाई और कंदमूल खाकर रहने लगे। अच्छी दिनचर्या थी- केवल प्रभु का ध्यान और साधना।

जहां झोपड़ी बनाई, वहीं पास में जल धारा बहती थी, जिसमें जंगली जानवर अक्सर जल पीने आते थे। एक बार राजा बाहर बैठकर भगवत् चिंतन कर रहे थे कि देखा, एक हिरणी अपने बच्चों के साथ उस जल धारा में जल पी रही थी। अचानक निकट ही उन्हें शेर के दहाड़ने की आवाज सुनाई दी।

शेर की दहाड़ सुनकर हिरणी घबरा कर वेग से जलधारा के पार कूदी। मां के पीछे-पीछे उसका बच्चा भी कूदा, मगर बीच में ही गिर गया और जान बचाने के लिए हाथ पैर मारने लगा। बहुत असहाय अवस्था थी। राजा को दया आयी। वे जाकर बच्चे को धारा से निकाल लाए। कहीं उसे कोई जंगली जानवर न खा जाए, इस भय से हिरण के बच्चे को अपनी झोपड़ी में ही रख लिया। धीरे-धीरे वह बड़ा होने लगा। राजा कभी उसके लिए कोमल घास इकट्ठा करते, तो कभी दूध की व्यवस्था करते। वे उसकी गतिविधियों में खोने लगे। जिस माया को छोड़कर वे वन में आए थे, उसने यहां भी उन्हें घेर लिया। अब राजा को हर समय उस हिरण के बच्चे का ही ध्यान बना रहता। कभी उसके खाने-पीने की चिन्ता करते तो कभी उसकी सुरक्षा की, तो कभी उसका चौकड़ी भरना निहारते रहते। जिस माया पर विजय पाने निकले थे, वे उस से हार गये थे।

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि अंत काल में जो जैसा स्मरण करता है, उसे अगले जन्म में वैसी ही प्राप्ति होती है। राजा भरत का ध्यान अब हिरण में रहता था। इसलिए अंत समय आया तो उन्हें यही चिन्ता लगी रही कि मेरे बाद इसकी रक्षा कौन करेगा? भागवत पुराण की कथा के अनुसार वे अगले जन्म में हिरण की ही योनि में पैदा हुए। पूर्व जन्म की भक्ति के कारण उन्हें सब कुछ याद था और वे अन्य हिरणों के साथ न रहकर ऋषियों की कुटी के आस पास ही मंडराते रहते थे। उससे अगले जन्म में वे जड़ भरत के नाम से विख्यात हुए। इस पुरा कथा को बताने का उद्देश्य यह कि हमारे शास्त्र, हमारे ऋषि, हमारे संत जन सब एक ही बात बार-बार दोहराते हैं कि मनुष्य जीवन बहुमूल्य है, इसे गंवाना नहीं चाहिए। अक्सर यह बात सुनने को मिलती है कि भई अभी भजन की क्या आवश्यकता है? अभी तो हम युवा है, बुढ़ापे में देखेंगे कि किसका भजन करना है। लेकिन सच तो यह है कि यही पता नहीं कि हम बुढ़ापा देखेंगे की नहीं। मान लेते हैं कि हमें किसी प्रकार से लंबी आयु का वरदान प्राप्त है। लेकिन यह तो स्वाभाविक ही है कि जितनी मेहनत व प्रयत्न हम अपनी युवावस्था में कर लेते हैं, बुढ़ापे में नहीं कर सकते। अगर प्रयत्न पूर्ण नहीं हुआ तो अंत काल में न जाने क्या कारण आ जाए और हमको फिर से जन्म-मृत्यु के चक्र में आना पड़ जाए।

कहते हैं कि अगर पत्थर पर भी बार-बार रस्सी फेरो तो निशान पड़ जाता है। अगर हमारे मानस पटल पर दुनियावी बातों के निशान गहरा गए तो अंत काल में भी हमें प्रभु का भजन-चिंतन कहां याद रहेगा। मृत्यु अवश्यंभावी है। हम जो सोचते हैं कि मुझे कुछ नहीं होगा, मेरी लम्बी उम्र है। हम भूल जाते हैं कि वह समय (अंत काल) तो सब का आना है। हो सकता है कोई युवा न हो, यह भी हो सकता है कोई बूढ़ा न हो, पर अंत तो सबका निश्चित है। फिर यह भी निश्चित नहीं कि पुनर्जन्म मनुष्य के ही रूप में हो। ऐसे में अगर हम जानते-बूझते भी अपना भविष्य सुधारने की चेष्टा नहीं करें, तो कौन हमें बुद्धिमान मानेगा। ●

घरेलू नुस्खे

प्यास अधिक लगना

◆ आंवला एवं मिश्री को मुंह में रखकर चूसें। इससे प्यास मिटती है।
◆ नींबू की शिंकजी भी प्यास को मिटाती है।
◆ धनिया 20 ग्राम, मिश्री 20 ग्राम को घोटकर पीने से प्यास मिटती है।
◆ इमली 40 ग्राम को भिगोकर रखें। मसलकर 40 ग्राम मिश्री मिलाकर 250 ग्राम पानी में मिलाकर पीना चाहिए। इससे प्यास मिटती है।
◆ इमली 10 ग्राम, आलु बुखारा 10 ग्राम, नमक 1 ग्राम, जीरा 1 ग्राम को पीसकर 100 ग्राम पानी में मिलाकर पीने से प्यास मिटती है।
◆ सिरका दो चम्मच (10 ग्राम) मिश्री 20 ग्राम को 100 ग्राम पानी में घोलकर पीने से प्यास मिटती है।

लू लगना

◆ कच्चे आम को भूनकर छिलका उतारकर पानी में मल-मलकर गुठली निकाल लें। फिर नमक और जीरा मिलाकर पियें, लू व दाह में लाभ करता है।
◆ दो नींबू का रस और मिश्री 40 ग्राम को 250 ग्राम पानी में मिलाकर पीने से ठंडक होती है।
◆ चंदन और कपूर को घीसकर शरीर पर लगाने से ठंडक करता है।
◆ नीम की लकड़ी, लाल चंदन को कलमी सोरे के साथ मिलाकर शरीर पर लेप करने पर ठंडक हो जाती है।

हाथ-पांव में जलन

◆ आंवला 10 ग्राम, सौंफ 10 ग्राम, मिश्री 30 ग्राम को कूटपीसकर 250 ग्राम पानी के साथ पीने से जलन मिटती है।
◆ नीम की छाल एवं कपूर के साथ घिसकर हाथों पर लगाने से जलन कम होती है।
◆ चुने का निथरा हुआ पानी 40 ग्राम में 40 ग्राम तिली का तेल मथ मलहम की तरह बनाएं। इसे हाथ-पांव पर लगाने पर जलन कम होती है।
◆ रसौत 5 ग्राम, सफेद चंदन 27 ग्राम और कपूर 2 ग्राम को पानी में पीसकर पांव पर लेप करने पर जलन मिटती है।

-स्वामी धर्मानन्द
अध्यात्म साधना केन्द्र,
छत्तरपुर रोड महरौली, नई दिल्ली

हनुमान का न्याय मार्ग

■ आचार्यश्री विद्यासागर

आज विष्णु की उपासना करने वाले वैष्णव हैं। बुद्ध की उपासना करने वाले बौद्ध हैं। जिनेन्द्र भगवान की उपासना करने वाले जैन हैं, पर ध्यान रखना धर्म सम्प्रदायातीत है। मैं जैन हूं, मैं हिन्दू हूं, मैं सिक्ख हूं या ईसाई हूं या मैं मुस्लिम हूं, इस प्रकार की मान्यता हमारे समाज रूपी महासागर के विशाल अस्तित्व को समाप्त करने वाली है। इस तरह टुकड़ों-टुकड़ों में बंटकर, एक-एक बूंद होकर अपने अस्तित्व को खोने में ज्यादा समय नहीं लगेगा। बूंद को सुखाने के लिए थोड़ी-सी सूर्य की तपन पर्याप्त होती है। हमारा कर्तव्य है कि हम धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझें, धर्म को जीवन में लायें और एक साथ रहकर परस्पर एक-दूसरे के प्रति, प्राणिमात्र के प्रति, समूचे अस्तित्व के प्रति सद्भाव रखें। रामचंद्रजी को बनवास हुआ। सीताजी का हरण हो गया। तब राम, सीता के वियोग में विचलित हो उठे। कभी नदी के पास जाकर पूछते कि हे नदी, मेरी सीता कहां गई है, तुम्हें मालूम होगा, तुम तो बहुत दूर से बहती आ रही हो, मेरी सीता जरूर तुम्हारे किनारे आयी होगी, पानी पिया होगा, संध्या-वंदना की होगी, तुम्हारे तट पर बैठकर अर्हन्त भगवान का ध्यान किया होगा, मेरी स्मृति आने पर रोती होगी। कभी वृक्ष के समीप जाकर पूछते कि हे वृक्ष, तुम्हीं बताओ मेरी सीता यहां से गुजरते समय तुम्हारी छाया में बैठी होगी, रसदार फल खाये होंगे, फिर किस ओर चली गई?

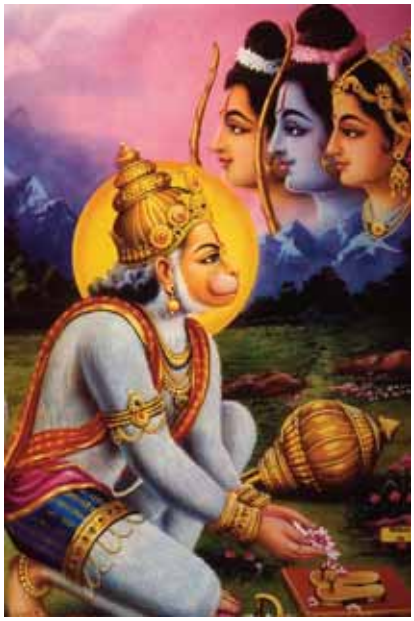

कहते हैं कि रामचंद्रजी कंकर-कंकर से पूछते रहे, पर सीता का कहीं पता नहीं लगा। इसी बीच एक दिन जब सुग्रीव, जो अपनी पत्नी का हरण हो जाने से दु:खी थे, रामचंद्रजी की शरण में आकर रोने लगे तो रामचंद्रजी ने उन्हें सांत्वना दी और कहा कि सीता की खोज बाद में करूंगा, पहले तुम्हारा दु:ख दूर करूंगा। तुम्हारा दु:ख दूर करना हमारा परम कर्तव्य है। शरणागत दीन-दु:खी, असहाय प्राणी की आवश्यकताओं की पूर्ति करना, उसे संकटों से बचाकर उसका पथ प्रशस्त करना, यही क्षत्रिय पुरुषों का काम है। यही श्रेष्ठ धर्म है।

कुछ समय में ही श्रीराम की मदद से सुग्रीव को अपनी खोयी हुई पत्नी सुतारा मिल गई और सुग्रीव भी अपनी सेना के साथ सीताजी की खोज के लिए तत्पर हो गये। परस्पर उपकार का यही सुफल होता है। उपकार का प्रबल भाव रखने वाले एक विशेष व्यक्तित्व थे हनुमान। न्याय का पक्ष लेने वाले वे रामभक्त हनुमान थे। न्यायप्रिय व्यक्ति अन्याय का कभी पक्ष नहीं लेता, चाहे अन्याय का पक्ष कितना भी प्रबल क्यों न हो। न्याय तो वही है जो सत्-पथ पर ले जाये। सच्चाई के मार्ग पर ले जाये। हनुमान सत्पथ पर चलने वाले महापुरुष थे। जैसे ही उन्हें ज्ञात हुआ कि रामचंद्रजी का मार्ग न्याय का मार्ग है, तो वे रावण से निकट संबंध होते हुए भी उनका साथ न देकर राम के साथ हो गए।

सीताजी की खोज में वे लंका पहुंचे और विभीषण के साथ वहां अशोक वाटिका में पहुंच गये जहां ग्यारह दिन से उपवास कर रही, राम के विछोह में दुखी सीताजी बैठी थीं। उनका संकल्प था कि जब तक स्वामी राम की खबर नहीं मिलेगी तब तक आहार ग्रहण नहीं करूंगी। आज इस तरह के आदर्श को प्रस्तुत करने वाले विरले होते हैं। हनुमानजी ने जाकर वंदना की और कहा कि मैं रामचंद्रजी के पास से आया हूं। आपका विश्वास और दृढ़ता देखकर अचरज में पड़ रहा हूं। आपका विश्वास सच्चा है। अब आप निश्चिंत हो जाइए, श्रीराम कुशल हैं। सारा वृतांत सुनकर और रामचंद्रजी के द्वारा भेजी गई मुद्रिका देखकर सीताजी आश्वस्त और प्रसन्न हुई। इस तरह न्याय का समर्थन करने वाले हनुमान को सफलता मिली। विभीषण ने भी अपने बड़े भाई रावण का साथ छोड़ दिया। प्रत्येक व्यक्ति के पास अपना-अपना पुण्य-पाप है। इसी के आश्रय से सारा संसार गतिमान है, चल रहा है।

आणविक शक्ति के आविष्कारक अल्बर्ट आइंस्टीन महान वैज्ञानिक माने गये हैं। उन्होंने लिखा है कि मैंने अणु की शक्ति की खोज विश्व शांति के लिए, मानव के कल्याण के लिए किये जाने वाले कार्यों के संपादन के लिए की है। मेरी दृष्टि विनाश की नहीं है। इतना अवश्य है कि जिस दिन मानव का दिल दिमाग खराब हो जाएगा, उसी दिन इस शक्ति के द्वारा प्रलय हो जाएगा। जब तक हमारे भीतर का ज्ञान सही-सही देवता की उपासना करता रहेगा, जब तक मन निर्मल रहेगा, तब तक हमारी भीतरी निधि को मिटाना संभव नहीं होगा। वह अक्षुण्ण बनी रहेगी। विनाश की शक्तियों के बीच भी अहिंसा की यह आत्मिक शक्ति अपराजेय रहेगी। रावण के अहंकार और हिंसात्मक आचार-विचार पर विजय पाने वाले हनुमान जैसे अहिंसा-धर्म के उपासक और महापुरुष आज भी पूज्य हैं।

रावण को हराकर धर्मज्ञ विभीषण को लंका का राज्य सौंपकर जब राम अयोध्या लौट आये

और सुख-शांति के साथ जीवन व्यतीत करने लगे तब एक दिन अपवाद की बात सुनकर सीताजी को वन में छोड़ आने का उन्होंने आदेश दे दिया। हनुमानजी ने विरोध किया पर राम अपने निर्णय पर अडिग रहे। कहा कि इसी में सभी का हित निहित है। यही दूरदर्शिता और मर्यादा है अन्यथा राजा के न्याय के प्रति लोगों का विश्वास उठ जायेगा। सीता को वन में अकेली छोड़कर कृतान्तवक्र चला गया। इसी बीच पुण्डरीकपुर के राजा वज्रजंघ अपनी सेना के साथ उस वन से निकले और सीताजी का हाल जानकर उन्हें अपनी धर्म-बहन मानकर पुण्डरीकपुर ले आये। वहीं सीता के दो परमवीर पुत्र उत्पन्न हुए। एक दिन जब नारद सीता का हाल जानने वहां पहुंचे तो दोनों पुत्रों लव और कुश ने उनका सम्मान किया, जिससे संतुष्ट होकर नारद ने कहा कि तुम्हारा वैभव और बल राम और लक्ष्मण की तरह हो।

तब दोनों पुत्रों लव और कुश ने पूछा कि ये राम-लक्ष्मण कौन हैं? तो नारद ने सारा वृत्तांत सुना दिया। दोनों कुमारों ने सारी बात सुनकर राम-लक्ष्मण से युद्ध करने का विचार बना लिया और कहा कि हम अपनी माता के साथ किये गये इस व्यवहार का बदला लेंगे। सीता सोचने लगीं कि अब क्या होगा? उन्होंने पुत्रों को समझाया कि श्रीराम के साथ विरोध करना उचित नहीं है। वे तुम्हारे पिता हैं, तुम बड़ी विनय के साथ जाकर नमस्कार करके पिता के दर्शन करो। यही ठीक रहेगा। पर लव-कुश नहीं माने। मां से कह दिया कि आप चिंतित मत होओ, हम आपके पुत्र हैं। वीरों का मिलन युद्धस्थल में ही होता है। हम वन में आपको अकेला छोड़ने वाले अपने पिता से युद्ध में ही मिलेंगे, और मां को प्रणाम करके अयोध्या की ओर चल पड़े।

जब कर्तव्य और न्याय में निपुण हनुमान को लव-कुश की वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो वे राम-लक्ष्मण की सेना को छोड़कर लव-कुश की सेना में आ गये, और कहा कि यही न्याय का पक्ष है। बड़ी विचित्र स्थिति बन गई। जो हनुमान पहले राम के साथ थे, आज वे ही श्रीराम के विपक्ष में युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गए। क्षत्रिय का धर्म यही है कि न्याय के पक्ष में धर्मयुद्ध करना और अन्याय का समर्थन नहीं करना।

युद्ध प्रारंभ हुआ और देखते-देखते राम-लक्ष्मण का पक्ष कमजोर पड़ने लगा। अंत में जब लक्ष्मण ने चक्ररत्न चलाया तो वह भी लव-कुश के पास पहुंचकर कांतिहीन हो गया। तब शीघ्र ही नारद ने जाकर लक्ष्मणजी को लव-कुश का परिचय दिया और सीता के दु:खों का वृत्तांत कह दिया। तब स्नेह में आकुल होकर राम-लक्ष्मण पुत्रों के समीप चल पड़े। दोनों पुत्रों ने भी रथ से उतरकर, हाथ जोड़कर, पिता को प्रणाम किया। सभी परस्पर मिले। हनुमान ने गद्गद् होकर श्रीराम को प्रणाम किया और दोनों पुत्रों को गले लगा लिया। सभी समझ गये कि हनुमान ने क्यों राम का पक्ष छोड़ दिया था। ऐसे न्याय का पक्ष लेने वाले हनुमान धन्य हैं। ●

■ आचार्य शिवेन्द्र नागर

प्रभु की सोच

एक बच्चा अपनी मां के साथ एक टॉफियों की दुकान में गया। उस दुकान में कई तरह की टॉफियां भिन्न-भिन्न जारों में सजी हुई थीं। बच्चे की आंखें उन टॉफियों को देखकर अति लालायित हुई। बच्चे की ललचाई आंखों को देखकर दुकानदार बच्चे पर मोहित हो गया तथा बच्चे से कहने लगा, ''बच्चे तू कोई भी टॉफी ले ले।'' दुकानदार की बात सुनकर बच्चे ने अनपेक्षित कार्य किया और दुकानदार से कहा–''मुझे नहीं चाहिए।''

दुकानदार ने बच्चे को हैरानी से देखा और कहा–''बच्चे तू कोई भी टॉफी ले ले, मैं तुझसे पैसे भी नहीं लूंगा।'' मां ने भी दुकानदार की हां में हां मिलाई और कहा–बेटे तू कोई भी टॉफी ले ले। बच्चे ने फिर नकारात्मक उत्तर दे दिया। मां और दुकानदार हैरान परेशान एक दूसरे को देखने लगे। ऐसे में दुकानदार ने स्वयं जार में हाथ डाला और बच्चे की तरफ मुट्ठी बढ़ाई। बच्चे ने झट से अपने स्कूल के बस्ते में सारी की सारी टॉफियां डलवा लीं। दुकान से बाहर आने पर मां ने बच्चे से पूछा–बड़ा अजीब लड़का है तू। जब तुझे बोला टॉफियां लेने को मना कर दिया और जब दुकानदार ने टॉफियां दीं तो बैग भर कर ले लीं। बच्चे ने मां को कहा–''मां मेरी मुट्ठी बहुत ही छोटी है, परन्तु दुकानदार की मुट्ठी बहुत बड़ी है। मैं लेता तो कम मिलतीं, उसने दी तो बड़ी मुट्ठी भर कर दीं।''

यही हाल मनुष्य का है। हमारी सोच बड़ी छोटी है और प्रभु की सोच बहुत बड़ी है। आज से 25 वर्ष पहले यदि आपको वस्तुओं के लिए इच्छाओं की सूची बनाने को बोलता तथा पूछता–आपकी जिन-जिन वस्तुओं की इच्छा है उसे लिखो तो शायद उस समय जो लिखते, वह आज के संदर्भ में बहुत तुच्छ होता। आज आपको प्रभु ने या प्रकृति ने इतना कुछ दिया है, जो आपकी सोच से भी बड़ा है। अपने आसपास पड़ी वस्तुओं की तरफ नजर घुमाकर देखें और सोचें, जिन वस्तुओं को आप सहजता से भोग रहे हैं वे कई साल पहले आपकी सोच में भी नहीं थीं। इसलिए हमारी सोच बहुत छोटी हैं तथा प्रभु की सोच हमारे लिए बहुत विशाल और व्यापक है। श्रीमद् भगवद्गीता में एकदम मध्य के श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं–

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना: पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।

जो अनन्य भाव से मुझको निरन्तर चिंतन करते हुए भजते हैं, उन नित्य निरंतर चिंतन करने वाले पुरुष को योग, क्षेम (सांसारिक और आध्यात्मिक सुख) मैं स्वयं ही प्राप्त करवा देता हूं।

भजना सजा नहीं है अपितु भजना तो वास्तव में मजा है। यह बात मात्र प्रभु के विषय में ही लागू नहीं होती, अपितु हर वस्तु और विषय से इस श्लोक का सरोकार है। आप जिस भी वस्तु विषय को भजें, उसे पूर्णता: से भजें। भजना अर्थात् उसे जीवन में अंगीकार करना, भजना अर्थात आपके और उस विषय वस्तु में कोई भी अन्तर ना रहे। आधे-अधूरे मन से ना भजें। बला समझकर ना भजें।

किसी शायर ने कहा है–

ना खुदा ही मिला, ना विसाले सनम।
न इधर के रहे, ना उधर के रहे।।

किसी व्यक्ति के मन में यह सोच आ सकती है कि कहीं अध्यात्म में आने के बाद यह जीवन का सफर फटे बादल की तरह व्यर्थ तो नहीं हो जाएगा? इस विचार का तोड़ भगवान स्वयं गीता में कहते हैं– जो भी व्यक्ति अपने जीवन में श्रेष्ठ नियमों को अपनाता है उसकी कभी दुर्गति नहीं होती। वह जीवन के हर पल को अपने स्वभाव के अनुसार बड़ी सहजता से जीता है।

बस अंत में इतना ही कि हम अपने नित्य कर्म को पूरी दक्षता से करें तथा कर्म के फल को प्रभु को अर्पण कर दें तथा उस सोच को कभी ना भूलें कि हमारी मुट्ठी बहुत छोटी है और प्रभु की मुट्ठी बहुत बड़ी है। सोचिएगा इस बात पर!

-1964/10, आउटराम लेन
किंग्सवे कैम्प, जी.टी.बी. नगर
दिल्ली-110009

विराट विभूतिमयी प्रकृति

■ डॉ. सुनील कुमार अग्रवाल

प्रकृति तो सदा से अविकारी है। वह मानुषी कुकृत्यों से भी नहीं हारी है क्योंकि उसकी स्वनियामक सत्ता है। प्रकृति में तांडव है तो लास्य भी है। वेदना है तो हास्य भी है। हमारा मन मूर्तिकार की तरह देव विग्रह गढ़ता है। जब कोई माटी का पिण्ड मूर्तिकार के हाथ में आ जाता है तो वह प्रतिमा बन जाता है। निराकार को आकृति में बांधना और मूर्तित करना कठिन कार्य है। भक्त और भगवान दोनों ही इस कठिन कार्य को निभाहते हैं। भक्त ईश्वर की प्रतिमा गढ़ता है और भगवान माटी के पिण्ड रूप घट-घट में प्राण भरता है। प्रकृति में प्रतीक है, मिथकीय बाते हैं और अनंत रूप हैं।

प्रभु की संपूर्ण रचना मानव की सेवा एवं सृष्टि का संतुलन बनाये रखने के निमित्त हैं। जिन रचनाओं से हम विशेष रूप से प्रभावित हुए हैं उनमें वायु, जल, अग्नि, सूर्य, पृथ्वी इत्यादि हैं। यही ऊर्जा का स्रोत है। इनमें से किसी एक के अभाव में भी हमारा जीवन संकट में आ जायेगा। अत: इनकी स्थिरता एवं उन्नति के लिए प्रार्थनाएं की गई हैं। यहां तक कि हम संसार के रचनाकार को तो पूजते ही हैं। उसकी बनाई रचनाओं को भी उचित भाव से देखते हैं। इसी प्रकार पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदि उपादान मानव-मानव की सेवा में रत हैं, उन्हें भी हम पूजते हैं। गाय, गंगा, गायत्री और धरती को समस्त प्रकृति ममत्व भाव से देखती है। प्रकृति उपादानों के परस्पर पूरक संरक्षण से ही कल्याण होगा। गीता में भी यही कहा गया है-

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तुव:।
परस्पर भावयन्त: श्रेय: परमवाप्स्यथ।।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने परब्रह्म की महिमा का बखान सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में किया है। ब्रह्म को सत्चित्त आनंद स्वरूप कहकर उनकी व्यापकता को स्वीकारा है और अव्यक्त विग्रह बतलाकर निर्गुण रूप कहा है। मनीषियों के अनुसार भक्त तुलसीदास ने केवल ईश्वर के प्रेम के वशीभूत विष्णु अवतार प्रभु राम के रूप में दर्शाकर सगुण स्वरूप लीलाधारी नहीं कहा, वरन् वास्तव में ईश्वर प्राकृत रस सत्वादि गुण रहित हम पर निर्गुण हैं। वही दिव्य गुणवेशी होने पर इन्हें सगुण माना गया है। विनय पत्रिका में उन्होंने लिखा है-

सच्चिदव्यापकानंद परब्रह्म-पद-
विग्रह-व्यक्त लीलावतारी।
विकलब्रह्मादि, सुर सिद्ध, संकोचवश,
विमल गुण-गेह नर दे-धारी।।

घट-घट वासी हैं राम, कण-कण में हैं राम,

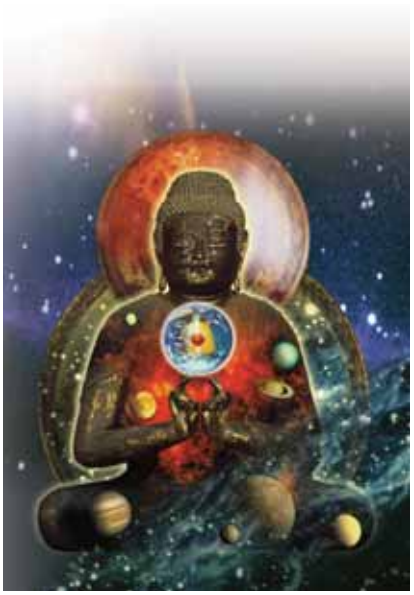

सर्वथा सत्य है राम का नाम। जिन्दगी प्रकृति की वंदगी है। प्रकृति को प्रणाम है। चेतना का परिणाम है। जिन्दगी प्रकृति का पुरस्कार है। परितंत्र का आधार है। पंचभूता प्रकृति को हमारा नमस्कार है। मैं प्रकृति और परमात्मा के हर रूप का उपासक हूं। यदि जीवन और प्रकृति को एक साथ देखें तो जिन्दगी आसान हो जाती है। जिन्दगी से तनाव तिरोहित हो जाता है। मन भाव पुलकित हो जाता है। जीवन हर्षित रोमांच हो जाता है।

प्रकृति में कहीं अंधेरी आवारगी है तो कहीं उजली संजीदगी और वस्तुत: यही है जिन्दगी। कहीं तपिश है तो कहीं बरखा की शीतल फुहार। प्रकृति तो एक ही है वह हमारी दृष्टि एवं दृष्टिकोण के अनुसार अलग-अलग नजर आती है तथा अपने प्रभाव भी भिन्न-भिन्न प्रकट करती है यही तो प्रकृति की विराटता है और बहुरूपता है। पुराणों में कहा गया है कि आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, वृक्ष, नदियां और समुद्र सब ही श्री हरि के शरीर रूप हैं इसलिए सभी भूतों को अनन्य भाव से प्रणाम करें।

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि
सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन।
सरित् समुद्रांश्च हरे: शरीरं यत्किञ्च
भूतं प्रणमेदनन्य:।।

विराट के साथ जीने की ललक तथा जीवन में शाश्वत सत्य सनातन की खोज हमें दिव्यता प्रदान करती है। मानवीय संबंध सरोकारों जैसी रागात्मक ऊर्जा को स्वयं दिव्य विराट विभूति के समर्पण होना ही भक्ति विश्वास है। सृष्टि के कण-कण में दिव्यता एवं भव्यता का वास है और यही अटूट विश्वास हमें विराट वासुदेव के समीप लाता है और हमारे अंदर प्रभु भक्ति की प्यास जगाता है।

सूफी मत में अनेक बातें प्रचलित हैं जिन्हें सिद्धांत रूप में स्वीकारा गया है। पहले सिद्धांत के अनुसार यह चराचर जगत परमार्थ तत्व की इच्छाशक्ति का विकास है तथा उसका ही स्वरूप है। इसे कर्म द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। कर्म इच्छाशक्ति एवं संकल्प से होते हैं। दूसरे सिद्धांत के अनुसार परमार्थ तत्व सौन्दर्य पृक्त है, सौन्दर्य स्वरूप है, वह नित्य है तथा परमात्मा की एकमेव प्रति छवि है। मनुष्य के अंदर जो अभिमान-अहंकार है उसकी निवृत्ति प्रेम द्वारा ही हो सकती है। तीसरे सिद्धांत के अनुसार परमार्थ तत्व स्वयं प्रकाशित है ज्योतिपुंज स्वरूप परमात्मा की ज्योति रश्मियों से नई-नई किरणें उत्पन्न होती हैं। इन आलोकित रश्मियों को देवता मानकर मातृका, वर्णा तथा कला नाम से जाना जाता है। सूफियों द्वारा व्यक्त यह सभी सिद्धांत परम के पास लाते हैं जो अनगढ़ रूपता को सिद्ध भी करते हैं।

कामरूपा प्रकृति कल्पना शक्ति से ओत-प्रोत रहती है। हमें चाहिए कि हम प्रकृति के चितेरे बनें। प्रकृति के चित्रों को ध्यान से देखें उनमें ईश्वर को खोजें। ईश्वर के इतने बिम्ब प्रतीक, अवतार चिन्ह और संदर्भ हैं कि हम भ्रमित हो जाते हैं, संशय से भर जाते हैं तथा आस्था की मूर्ति तलाशना कठिन हो जाता है किन्तु अपने को निर्मल-निरामय रखें तो स्वयं ईश्वर से साक्षात्कार हो जाएगा। जीवन प्रभु प्रेम से पुलकित हो जाएगा और सुनाई देने लगेंगे बांसुरी के सुर पूर्ण लयता के साथ।

मूर्ति रस स्फूर्ति में सहायक होती है। सुंदर-सुंदर मूर्तियों की उपासना, ध्यान, सेवा से परमानन्द मिलता है। मूर्ति में पुरुष-प्रकृति का भेद नहीं रहता। हम लोग ब्रह्म के रूप व गुण गढ़ते हैं। हमें ईश्वर का जो भी रूप अच्छा लगता है उसके प्रारूप बनाकर उसे अपने मन मंदिर में अधिष्ठित करते हैं। ईश्वर ही तो घट-घट में प्राण देता है। ईश्वर स्वयं अजन्मा रहता है और धर्म की रक्षा हेतु आवश्यकता पड़ने पर मनुष्य रूप में अवतार भी लेता है। ब्रह्म सदा संपूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण निकलकर जो शेष बचता है वह भी पूर्ण ही होता है। संपूर्ण जगत भी उसी परब्रह्म का विस्तार ही तो है। किसी सूफी ने कहा है-

एक राम घट-घट में डोले
एक राम अवध में बोले
एक राम से सकल पसारा
एक राम है सबसे न्यारा।

-स्वप्निल सदन, रानी बाग, सुभाष रोड, चंदौसी (मुरादाबाद)-202412

गौवंश
भारतीय कृषि संस्कृति का आधार

■ फतहलाल गुर्जर 'अनोखा'

भारतीय संस्कृति का मूलाधार गौ-धन रहा है। कृषि प्रधान देश होने से गौ-वंश कृषि का आधार माना गया। गाय का बछड़ा 'बैल' शक्ति का प्रबल प्रतीक बना और गाय से प्राप्त पंचगव्य दूध, दही, गौ-घृत, गौ-मूत्र व गोमेय (गोबर) अमृत तुल्य माने गये। ये पदार्थ शरीर के सर्व विकारों का शमन कर अंग-प्रत्यंग को ऊर्जा प्रदान करते हैं। गोबर में तमाम उर्वरा तत्व होते हैं, जो धरती की पोषणता के लिए अत्यावश्यक होते हैं और अन्न के भंडार भर जाते हैं। इसी कारण गोमेय का लक्ष्मी रूप से दीपावली पर घर-घर में भारतीय नारियां गोवर्द्धन बनाकर पूजती हैं। रस के प्रतीक गन्ना, वस्त्र का प्रतीक कपास व फल-फूल तथा वृक्षों के प्रतीक आम्र व चंदन के पल्लव गोवर्द्धनजी को चढ़ाकर दही, दूध, धूप-दीप से पूजा जाता है। कीटाणु नाशक गोमेय से पूजास्थल व कच्चे मकानों के फर्श लीपे जाते हैं। गोमूत्र में कई रासायनिक तत्व होते हैं जिनमें नाइट्रोजन, अमोनिया, कॉपर, मैग्नीज, कैल्शियम, आयरन, फास्फेट, पोटेशियम, सल्फर, यूरिया, आरोग्यकारक अम्ल, जल, यूरिक एसिड, विटामिन ए, बी, सी, डी तथा अन्य कई मिनरल्स, हिप्यूरिक एसिड व स्वर्ण क्षार आदि प्राप्त होते हैं। गौ-मूत्र मानवीय अनेकानेक बीमारियों की औषध माना गया है।

महाभारत में आया है कि श्रीकृष्ण कहते हैं- गावो ममोगग्रतो नित्यं गाव: पृष्ठत एवच गावो में सर्वतश्चैवगवां मध्ये वसाम्यहम्। अर्थात् मेरे आगे गाय, पीछे भी गाय तथा मैं हमेशा गायों के बीच ही रहता हूं।

महाभारत में आया है कि श्रीकृष्ण कहते हैं– गावो ममोगग्रतो नित्यं गाव: पृष्ठत एवच गावो में सर्वतश्चैवगवां मध्ये वसाम्यहम्। अर्थात् मेरे आगे गाय, पीछे भी गाय तथा मैं हमेशा गायों के बीच ही रहता हूं।

रघुवंशी दिलीप राजा ने कामधेनु की पुत्री नन्दनी की सेवा में स्वयं के प्राण भी सिंह को अर्पण करने को तैयार हो गए। श्रीकृष्ण गायों की श्रीवृद्धि व कृषि संस्कृति को बढ़ाने के लिए श्री नन्दबाबा व कृषक गोप-गोपियों के मध्य जाकर लीलाएं की। 'गौ' शब्द के अनेकार्थ होते हैं। जैसे- किरण, इन्द्रियां, पृथ्वी, गाय, तारक, सुषुम्ना नाड़ी, सोमकला, औषध, स्वर्ग व धारा आदि। 'गोपी' शब्द का अर्थ जिन्होंने अपनी इन्द्रियों को वश में कर ली, होता है। गोकुल का अर्थ गोवंशी जहां रहते हैं वह गांव तथा ब्रज का मतलब पशुओं के चरने की चरनोट (वन) होता है। श्रीकृष्ण का अर्थ कृ धातु से बना जिसका अर्थ खींचना और कृषक भी कृष+क खींचनेवाला (हल चलाने वाला) होता है। श्रीकृष्ण के भाई हलधर यानी हल को धारण करने वाला तथा किसान व बैल भी हल को धारण करते हैं। श्रीकृष्ण की योग माया (श्री राधिकाजी) वृष भानू की पुत्री यानी वृष (बैल) की पुत्री हुई। सारी की सारी कृषि संस्कृति श्रीकृष्ण ने पुन: सिखाई। जब नन्द गोप इन्द्र यज्ञ करने लगे तो श्रीकृष्ण ने उनसे कहा-

न न: पुरो जनपदा न ग्रामा न गृहावयम्।
नित्यं वनौक सस्तात वन-शैल-निवासिन:।।

हे बाबा नन्द! न तो हम राजा हैं, न हमारे अधीन जनपद न गांव और न ही कोई घर है। हम तो सदा के ही वनवासी हैं। वन और पहाड़ ही हमारे घर हैं। अत: हे पिताश्री! हमें इन्द्र-यज्ञ के स्थान पर श्री गिरिराज महाराज (गोवर्द्धनजी) का पूजन कर इन्हें अन्नकूट आरोगाना चाहिए।

इसी मंतव्य से वल्लभ सम्प्रदाय के मंदिरों में गोपाष्टमी व गोवर्द्धन पूजन महोत्सव मनाये जाते हैं। भारत की नारियां वत्स द्वादशी को गाय का पूजन करती हैं। अत: गौ-वंश भारतीय कृषि संस्कृति का आधार माना गया जो एक वैज्ञानिक विश्लेषण की कसौटी पर खरा उतरता है।

–श्री द्वारकेश राष्ट्रीय साहित्य परिषद
जाटगली, कांकरोली-313324
जिला-राजसमंद (राजस्थान)

शास्त्रोक्ति

वेदों से संपूर्ण यज्ञकर्म श्रेष्ठ है, यज्ञों से जप, जप से ज्ञान-मार्ग और उससे आसक्ति एवं राग से रहित ध्यान श्रेष्ठ है। ऐसे ध्यान के प्राप्त हो जाने पर सनातन ब्रह्म की उपलब्धि हो जाती है।

–मार्कण्डेयपुराण

अनुपम भक्ति

■ आचार्य विजय वीरेन्द्र सूरि

आदिनाथ के सुपुत्र भरत महाराज थे। छः खंड के मालिक चक्रवर्ती थे। संसार में रहते हुए भी अनासक्त थे। अतः उन्हें राजर्षि कहा जाता था। एक बार राजा भरत राजसिंहासन पर बैठे हुए धर्म-चर्चा में लीन थे। सभासदों के साथ तत्त्व चिंतन हो रहा था। सहसा एक राजसेवक ने राज्यसभा में प्रवेश किया। उसका चेहरा खिला हुआ था। चेहरे पर परम आनंद की रेखाएं स्पष्ट रूप से झलक रहीं थीं। भरत ने प्रश्न सूचक दृष्टि से उसे देखा और बोलने का संकेत किया। संकेत पाकर अभिवादन करते हुए उसने कहा–महाराज! अत्यंत शुभ समाचार है। उसी विनीता महानगरी के उपशाखा पुरिमताल के समीप शकटमुख नामक उद्यान में विराजमान प्रभु आदिनाथ को परम ज्ञान की उपलब्धि हुई है। लोकालोक स्वरूपी परम प्रकाश स्वरूप केवल ज्ञान उन्हें प्राप्त हुआ है। वह पूर्णज्ञानी सर्वज्ञ बन गए हैं।

यह सुनते ही वह भाव-विभोर, उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। उनके आनंद की सीमा न रही। उनका हृदय कमल खिल गया। सभासद भी आनंद में झूम उठे। प्रभु को केवल ज्ञान होने के समाचार के पश्चात् दूसरा राजसेवक भी शुभ समाचार लेकर आया।

भरत को नमस्कार कर वह बोला–महाराजा आपके प्रबल पुण्योदय से आयुधशाला में देवाधिष्ठित चक्ररत्न प्रकट हुआ है। इस चक्ररत्न के बल से चक्रवर्ती छः खण्ड पर, संसार पर विजय प्राप्त करता है।

चक्ररत्न की बात चल रही थी। तभी भरत को एक और संदेश देने के लिए राजसेवक आया। उसने राजा को बधाई देते हुए कहा–राजन्! महारानी ने शुभ लक्षणों वाले पुत्ररत्न को जन्म दिया है। सभासद बधाई देने लगे। वे हर्ष से नाच उठे किंतु भरत महाराजा सोच में पड़ गए। मन ही मन में सोचने लगे।

आज एक साथ तीन बधाइयां मिली हैं। पिता एवं प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ प्रभु को केवल ज्ञान, आयुधशाला में चक्ररत्न का प्रकट होना और पुत्र रत्न का जन्म, पुत्र की प्राप्ति। इनसे चक्ररत्न एवं पुत्र की प्राप्ति पुण्य से हुई है। किंतु पुण्य का कारण भी धर्म है। बिना धर्म के पुण्य का उपार्जन नहीं हो सकता। सुख व शांति का मूल धर्म है।

पुण्य फल सुलभ है किंतु धर्माराधन का अवसर दुर्लभ है। प्रभु की भक्ति का अपूर्व अवसर आया है। उसे चूकना नहीं चाहिए, अतः प्रभु का महोत्सव सबसे पहले करना चाहिए। यह सोचकर भरत अपने परिवारजनों, नगरजनों और सेना के साथ भगवान के समवसरण में पहुंचे। उस समय स्वर्ग के असंख्य देव अपने स्वामी इंद्र के साथ तीर्थंकर प्रभु का केवल ज्ञान महोत्सव मनाने के लिए चले आ रहे थे। देवराज इंद्र और प्रथम चक्रवर्ती भरत ने प्रभु का कैवल्य उत्सव अत्यंत भावोल्लास से किया। दोनों की भक्ति में कोई कमी नहीं थी। किंतु देवराज इंद्र से भी भरत की भक्ति बढ़कर कर थी। क्योंकि भरत ने सांसारिक कर्तव्यों को, भौतिक उपलब्धियों को भी गौण कर दिया।

सांसारिक कर्तव्यों को गौण कर, सांसारिक कार्यों को छोड़कर प्रभु भक्ति में लगना गृहस्थ के लिए अत्यंत कठिन है, समय निकालना मुश्किल है। धर्म कार्यों में अग्रणी, परम प्रभु भक्त, अनासक्तराजर्षि भरत महाराजा की निष्काम भक्ति भक्त-जन प्रेरक है। अत्यंत प्रशंसनीय एवं आदरणीय है। अनेक सांसारिक कार्यों के बीच भी हमें धर्म व प्रभु उपासना में अवश्य समय निकालना चाहिए। ●

स्वस्तिक

स्वस्तिक' संस्कृत का शब्द है। यह मंगलकारी भावों का प्रतीक है।

भारतीय संस्कृति में कोई भी मंगल कार्य प्रारंभ करने से पूर्व 'स्वस्तिक' चिन्ह बनाने की परम्परा रही है। यह हम सभी जानते हैं कि भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। संभवतः यहीं से विश्व के अनेक देशों में इसका विस्तार हुआ होगा।

'स्वस्तिक' शब्द 'स्वस्ति' से बना है। इसका अर्थ होता है- मंगलमय। सिन्धु घाटी सभ्यता के अवशेषों में भी यह पाया गया है। कुछ विद्वानों की यह मान्यता है कि यह ॐ का ही विकृत रूप है। 'स्वस्तिक' शब्द का प्रयोग पश्चिमी देशों में भी होता है। विभिन्न देशों में इसका अर्थ भिन्न-भिन्न है।

भारत में स्वस्तिक का रूपांकन छह रेखाओं के प्रयोग से होता है। दो रेखाओं से 'क्रॉस' का निर्माण, फिर उनकी चारों धुरियों से दायीं ओर बढ़ती चार रेखाएं। इन रेखाओं को आचार्य अभिनव गुप्त ने नाद ब्रह्म अथवा अक्षर ब्रह्म का परिचायक माना है। नाद के पश्यंती, मध्यमा तथा बैखरी- तीन रूप हैं। अतः स्वस्तिक ब्रह्म का प्रतीक है।

–विपीन जैन, लुधियाना

धूप में छांव का अहसास कराता कोडाइकनाल

■ पुखराज सेठिया

कोडाइकनाल का अर्थ है-धूप में छांव। सचमुच में कोडाइकनाल गर्मी में तपते मुसाफिर के लिए ठंडे विश्रामघर से कम नहीं है। कोडाइकनाल के पहाड़ों में फैली हरियाली, कलकल नाद करते झरनों की खूबसूरती यहां आने वाले पर्यटकों को बेहद आकर्षित करती है। आइए, चलते हैं कोडाइकनाल की सैर पर, जहां की खूबसूरती एवं पर्यावरण की स्वच्छता आज भी बेमिसाल है। कोडाइकनाल के प्रमुख दर्शनीय स्थल-

कोडाइ लेक: लगभग 60 एकड़ क्षेत्र में फैली कोडाइ लेक काफी शांत एवं खूबसूरत है। यहां आप बोटिंग का आनंद ले सकते हैं। यहां मोटर बोट और पेडल बोट दोनों उपलब्ध हैं। अगर आराम से झील और उसके आस-पास के प्राकृतिक दृश्यों का आनंद उठाना चाहते हैं तो आप किराये पर नाव के साथ-साथ चलाने वाले को भी किराए पर ले सकते हैं। इसके अलावा झील को चारों तरफ से घेरती हुई पांच कि.मी. लम्बी सड़क पर बाइक या घुड़सवारी से झील के चक्कर लगाते हुए उसकी खूबसूरती को अपनी यात्रा की यादों में शामिल कर सकते हैं। कोडाइ लेक बस स्टैण्ड से तीन कि.मी. की दूरी पर है।

कुरुजी मंदिर: कुरुंजी का अर्थ है-पहाड़ी क्षेत्र। इसलिए कुरुंजी मंदिर, मुरुगा यानी पहाड़ी देवता को समर्पित है। साथ ही यह कुरुंजी नाम के फूल से भी संबंधित है, जो दो साल में एक बार खिलता है। इस मंदिर से आपको पलानी हिल्स भी दिखाई देगी। कोडाइ लेक से कुरुंजी मंदिर तीन कि.मी. की दूरी पर स्थित है।

चैतियर पार्क: कुरुंजी मंदिर जाने के रास्ते में यह पार्क आता है, जो बस स्टैंड से लगभग तीन कि.मी. दूर है। यहां आकर पर्यटक प्रकृति से काफी करीबी महसूस करते हैं। इस पार्क का शांत एवं सौम्य वातावरण सभी को पसंद आता है।

कोकर्स वॉक: एक किलोमीटर लंबी माउंटेन रोड कोकर्स वॉक के नाम से मशहूर है। कोडाइकनाल से आधा कि.मी. दूर इस सड़क पर पैदल चलने के साथ-साथ दिन में दक्षिण दिशा में डॉल्फिन नोज, पूर्व में वैली और दी पैम्बर रिवर के साथ ही मदुरै को भी निहारने का मौका मिल सकता है। कोकर्स वॉक वैन ऐलन हॉस्पिटल से शुरू होता है और मुख्य सड़क में सैंट पीटर्स चर्च के पास आकर मिल जाती है। यहां से मैदानी क्षेत्र के खूबसूरत नजारों का मजा लिया जा सकता है।

सिल्वर कासकेड: यह मुख्य घाट रोड पर स्थित है। कोडाइ रोड से कोडाइ पहुंचने के बाद इस वॉटर फॉल तक आने के लिए 8 कि.मी. की दूरी तय करनी पड़ती है, जिसे आप बाइक या फिर बस यात्रा के दौरान प्राकृतिक दृश्यों का आनंद उठाते हुए भी पूरा कर सकते हैं। इस झरने की ऊंचाई 180 फीट है।

बीयर शोला फॉल्स: कोडाइकनाल में अगर पिकनिक मनाने के लिए कोई उपयुक्त स्थान है तो वह है बीयर शोला फॉल्स, जो बस स्टैंड से डेढ़ कि.मी. दूर है। इसे बीयर शोला फॉल्स इसलिए कहा जाता है, क्योंकि किसी समय यहां भालू अपनी प्यास बुझाने आया करते थे। यहां पहुंचने के लिए आपको पहाड़ी रास्तों से होकर जाना पड़ेगा। इसके अलावा यहां दो झरने और भी हैं। एक पैंबर फॉल्स और दूसरा थलियर फॉल्स। थलियर फॉल्स सबसे अधिक फैला हुआ (13 कि.मी.) और भारत के सबसे ऊंचे झरनों में से एक है। इसकी ऊंचाई 975 फीट है।

पिलर रॉक्स: ग्रेनाइट की तीन चट्टानों, जिनकी ऊंचाई लगभग 400 मी. है, एक-दूसरे से कंधे से कंधा मिला कर खड़ी हैं। जहां यह पहाड़ियां जमीन से जुड़ती हैं, वहीं पिकनिक मनाने वालों के लिए स्वर्ग शुरू होता है।

डॉल्फिन नोज: बस स्टैंड से 8 कि.मी. की दूरी पर पुरानी सड़क से होते हुए पैंबर ब्रिज पार कर यहां पहुंचा जा सकता है। पहाड़ी रास्ते से होते हुए आपके सामने अचानक एक पहाड़ी ऐसे आ जाती है, जिसे देखने पर ऐसा लगता है, मानो डॉल्फिन फिश की नाक देख रहे हों। इसकी गहराई 6600 फीट है। यहां एक तरफ आसमान चूमते पहाड़ हैं, वहीं पाताल को छूती हुई गहरी घाटियां भी हैं।

-एम-25, लाजपत नगर-2
नई दिल्ली-110024

जन्म-जन्म का साथ संभव है

■ डॉ. के. के. अग्रवाल

बहुत सारे युगल यह सोचते हैं कि क्या अगले जन्म में भी उन्हें एक दूसरे का साथ मिलेगा? लेकिन मेड फॉर इच अदर युगल इस बात में विश्वास करते हैं कि अगले जन्म में उन्हें निश्चित रूप से एक दूसरे का साथ मिलेगा। यह साथ एक दो नहीं बल्कि सात जन्मों तक का होगा। उनका विश्वास प्रगाढ़ होता है।

बहुत सारे धार्मिक ग्रंथों में ऐसे संदर्भ हैं। गौतम बुद्ध ने एकबार एक जोड़े (जन्म-जन्म के संबंध में विश्वास करने वाले) से कहा- आप समान चीजों में विश्वास करते हैं, आपकी शिक्षा-दीक्षा एक जैसी हुई है, आप भलाई के कार्य समान रूप से करते हैं और अगर आप ऐसा ही मानते हैं तो अगले जन्म में भी आपकी सोच ऐसी ही होगी।

भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने इसका विस्तार से उल्लेख किया है। अपने उपदेश में वह कहते हैं- मृत्यु के समय व्यक्ति को सिर्फ भगवान और चेतना का विचार करना चाहिए। उन्होंने वह विधि बताई है जिसके द्वारा व्यक्ति मृत्यु के समय अपने दिमाग को स्थिर कर सके। अध्याय 8.10 में वे कहते हैं- जो लोग मृत्यु के समय योग का प्रयोग कर मस्तिष्क पर नियंत्रण रखते हैं, वे अपने प्राण को भौंहों के केन्द्र में स्थिर कर लेते हैं।

श्रीकृष्ण के अनुसार मृत्यु के समय मनुष्य की मानसिक स्थिति, उसके संपूर्ण जीवन की मानसिक स्थिति पर निर्भर करती है। जीवनभर मनुष्य जिस सोच को अपने जीवन में ढाल कर आगे बढ़ता है, वही उसकी पहचान बन जाती है। उससे अलग होना फिर उसके लिए संभव नहीं होता। इसलिए जो लोग अंतिम समय में ओम का उच्चारण कर पाते हैं, उन्हें या तो मोक्ष मिलता है या फिर अगले जन्म में भी उनकी सारी इच्छाओं की पूर्ति होती है। क्योंकि प्राण त्यागते समय भी ओम कहने की स्थिति में वही हो सकता है, जिसने जीवन भर वह किया हो।

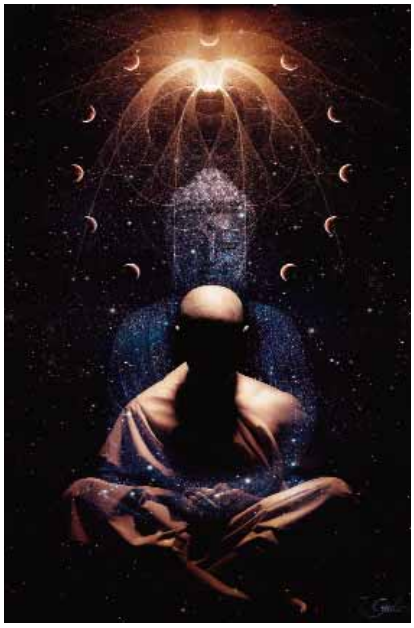

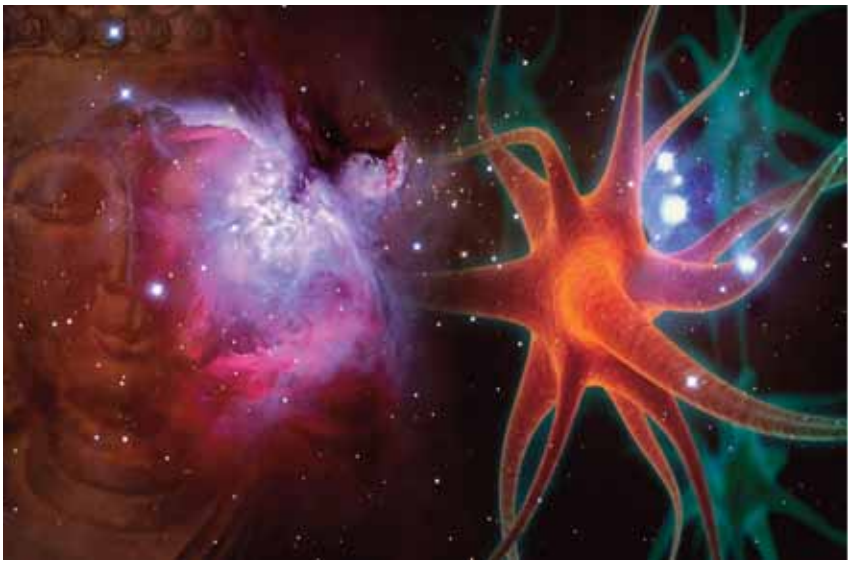

श्रीकृष्ण के अनुसार मृत्यु के समय मनुष्य की मानसिक स्थिति, उसके संपूर्ण जीवन की मानसिक स्थिति पर निर्भर करती है। जीवनभर मनुष्य जिस सोच को अपने जीवन में ढाल कर आगे बढ़ता है, वही उसकी पहचान बन जाती है। उससे अलग होना फिर उसके लिए संभव नहीं होता।

भगवान श्रीकृष्ण ने बेहतर जीवन शैली को महत्व दिया है। श्रीकृष्ण के अनुसार यदि किसी मनुष्य ने जीवन भर तामसिक या राजसिक जीवनशैली अपनाई है तो यह संभव नहीं है कि वह मृत्यु के समय सात्विक मनोदशा में रहे। भगवद्गीता के ही अध्याय 17.3 में श्रीकृष्ण मनुष्य की उस प्रकृति की बात करते हैं। वह कहते हैं कि मनुष्य जिन चीजों पर विश्वास करता है, धीरे-धीरे वही हो जाता है। जैसा सोचेगे वैसे ही हो भी जाओगे वाली कहावत भले ही पुरानी हो, लेकिन जीवन में यह आज भी उसी तरह प्रासंगिक है।

इसलिए सात्विक जीवन की समझ और इस प्रकार का जीवन जीने का अभ्यास स्कूली अवस्था में ही किया जाना चाहिए। सात्विक जीवन की राह का पहला घटक है सादा भोजन। सदियों से, पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह बात बताई जाती रही है। सात्विक भोजन का मूल वर्णन भगवद्गीता और योग शास्त्रों में मिलता है। स्वास्थ्य को अगर वैदिक, आयुर्वेदिक और एलोपैथ की मिलीजुली दृष्टि से भी देखें तो बहुत सारे सिद्धांत ऐसे हैं जिनका पालन आज भी किया जा सकता है। खासकर भोजन के लिहाज से।

फल शरीर में सात्विकता को बढ़ाते हैं इनमें कोलेस्ट्राल भी नहीं होता। भगवद्गीता में कहा गया है कि मांस, अंडे, खट्टे और तले हुए पदार्थ, नमकीन व ठंडे पदार्थ राजसिक या तामसिक प्रवृत्तियों को बढ़ावा देते हैं। लताओं से प्राप्त सब्जियां सात्विक तो हैं ही, किडनी के लिए काफी लाभकारी होती हैं जैसे- घीया, तोरी वगैरह। मिट्टी के नीचे पैदा होने वाले फल और सब्जियां भी तामसिक प्रकृति की होती है। जैसे आलू, शकरकंद, शलजम वगैरह।

जो फल कुदरती रूप से उजले हैं, स्वास्थ्य के लिए ठीक होते हैं। लेकिन जिनका रंग सफेद बनाया जाता है, वे आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं होते। जैसे सफेद नमक, सफेद चीनी, सफेद चावल। रात का भोजन दिन के भोजन से हल्का होना ही चाहिए। ●

कर्म से बदलता है भाग्य

भगवान ने तो आपको दीन-हीन-गरीब उपेक्षित पैदा नहीं किया। भगवान रूपी पिता भी क्या अपने बच्चों के साथ ऐसा बर्ताव कर सकते हैं। क्या आप अपने बच्चों के लिए ऐसी बातें सोच भी पाते हैं?

■ आचार्य सुदर्शन

यदि आप नक्षत्र की भाषा को समझ लें तो आप भी मानने लगेंगे कि व्यक्ति या प्रत्येक जीवन पर हमारे नक्षत्रों का प्रभाव पड़ता ही है। लेकिन सड़क के किनारे अपनी पोथी लेकर बैठने वाले लोगों को सिर्फ पांच रुपये में अंगूठी बेचता हुआ देखकर आपके मन में ऐसा होता होगा कि हमें भी इस तरह से सफलता मिल जाएगी और हमारा भाग्य बदल जाएगा। तो फिर आपसे अधिक भ्रम में कोई हो ही नहीं सकता है। सड़कों के किनारे ऐसे लोग आपको मिल जायेंगे, इनसे आपको भाग्य तो बदलेगा नहीं, अपितु आपकी जेब की दशा जरूर बदल जाएगी।

अपना भाग्य बदलने के लिए आपका कर्म करना होगा। मैं आपको इतनी-सी बात विश्वासपूर्वक बता दूं कि यदि आप कर्म करेंगे तो आप अपने बिगड़े हुए भाग्य को भी बदल सकते हैं। आप ऐसी भूल क्यों कर रहे हैं?

भगवान ने तो आपको दीन-हीन-गरीब उपेक्षित पैदा नहीं किया। भगवान रूपी पिता भी क्या अपने बच्चों के साथ ऐसा बर्ताव कर सकते हैं। क्या आप अपने बच्चों के लिए ऐसी बातें सोच भी पाते हैं? लेकिन यह तो हम हैं कि अपने कर्मों से ही अपने शरीर को गलाते और जलाते चले जा रहे हैं।

भगवान ने तो तुम्हें शरीर दिया आनन्दपूर्ण जीवन को जीने के लिए, लेकिन तुमने तो अपने जीवन को रोते हुए बिता दिया, तुमने तो अपने लिए दुःख, चिंता और क्लेश को बाजार से खरीद कर अपने घर लाकर रख लिया। इन सब चीजों का निर्माण भी तुमने स्वयं ही किया। ध्यान दें कि किसी छोटे बच्चे को कोई चिंता क्यों नहीं होती है? तुम भी तो ऐसा कर ही सकते हो। तुम भी सारी चिंताओं को छोड़ों और खड़े हो जाओ- तभी तो कबीदासजी कहते हैं:

कबिरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपने, चले हमारे साथ॥

एक अभिनव आदिवासी शिक्षा एवं जन कल्याण का विशिष्ट उपक्रम
गुजरात सरकार के सौजन्य से सुखी परिवार फाउण्डेशन द्वारा संचालित
एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय, कवांट

सुखी परिवार फाउंडेशन अपने विविध स्वस्थ, सुखी एवं समृद्ध समाज निर्माण के कार्यक्रमों में जोड़ रहा है एक अनूठी आदिवासी शैक्षणिक गतिविधि को। एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय आदिवासी जनजीवन को विकास के पथ पर अग्रसर करने की एक बहुआयामी योजना है। आपका सहयोग है स्वस्थ समाज निर्माण का आधार। अपनी विशाल और बहुउद्देशीय विद्यालय की योजना के साथ सुखी परिवार फाउंडेशन आपके सम्मुख है। सहयोग के लिए आगे बढ़े।

विद्यालय भवन के कमरों के सौजन्यदाता बनें

आपका सहयोग : समाज की प्रगति

SUKHI PARIVAR FOUNDATION
Head Office :
T. S. W. Center, A-41/A, Road No.-1, Mahipalpur Chowk, New Delhi-110 037
Phone: 011-26782636, 26782637, Mo: 9811051133
Delhi Office :
48, South Avenue, New Delhi - 110001
Kawat Office :
1, Abhay Raj Colony, Behind Parswais Building, P.O. Kawat-391170
Dist. Barodra (Gujrat) Mob. No.: 9879623013, 09825741631
website : www.sukhiparivar.com
E-mail : info@sukhiparivar.com

महका हुआ प्रभात है!

■ डॉ. सम्राट सुधा

रात काली हो मगर
रात फिर भी रात है
है प्रभु की कृपा
कहीं तो आखिर प्रात है,
तू जो घिरते तिमिर से
घबरा गया, सहम गया
रात काली बीतते ही
महका हुआ प्रभात है!

ऊंचा कितना ही गगन में
पाखी उड़े मगर उसे
अपना नन्हा नीड़ तो
धरा पे गढ़ना होता है
एक गोदी का सफ़र
अपने पांवों से गुज़र
अंत में फिर भी मगर
चार कांधों पे पूरा होता है
हमने हर गुत्थी कहा
सुलझ गयी, सुलझ गयी
जिन्दगी है क्या मगर
ये राज़ फिर भी राज़ है!

मुट्ठियों में रेत-सी
रित रही है जिन्दगी
और लम्बी उम्र की
हो रही है बन्दगी
सांस-सांस थक गयी
पर कदम बढ़ते रहे
आस्था के लाख सूरज
नित नये उगते रहे
घोर मरुस्थल था खड़ा
प्राण हरने के लिए
पर किसी को पाने की
प्यास आखिर प्यास है!

मरहमों का देवता
हर नगर-डगर मिला
मां के दुलार-सा
रफ़ूगर पर नहीं मिला
एक जुलाहा 'ढ़ाई आखर'
कह के पंडित हो गया
एक ज्ञानी उम्र भर
प्यार ढूंढता फिरा
मरघटों पे जिन्दगी
कह रही मैं कुछ नहीं
और इन्सां सोचता है
ये भी कोई बात है।

-94, पूर्वावली, गणेशपुर
रुड़की-247667 (उत्तराखंड)

नहीं तो हम टूट जाएंगे

■ संगीता शर्मा

रख दो हाथ सिर पे मां
नहीं तो हम टूट जायेंगे
हमारा कुछ भी ना बिगड़ेगा
जो तुझको हम शीश नवायेंगे
तुम्हीं से छांव मिलती है
घर में रौनक है तुम्हीं से
हम से ना रूठ जाना मां
वरना हम खुश न रह पायेंगे
रख दो हाथ सिर पे मां
नहीं तो हम टूट जायेंगे
तेरे ममता के आंचल में आकर
भूल जाते हैं हम गम सारे
हटा न देना सिर से आंचल
यह गम हम सह न पायेंगे
रख दो हाथ सिर पे मां
नहीं तो हम टूट जायेंगे
एक मां तेरा प्यार ही सच्चा
झूठे बाकि सबके वादे हैं
कभी दिल मां का न टूटे
बस यही खुद से कहना है
रख दो हाथ सिर पे मां
नहीं तो हम टूट जायेंगे

-103, राम स्वरूप कॉलोनी,
आगरा-282010 (उ.प्र.)

प्रतिदान दिलवाओ

■ डॉ. अर्चना रानी वालिया

हे रूपसी!
चाहे इन्द्र की शुचि हो,
या काम देव की रति,
या फिर मेनका/उर्वशि।
तुम सरीखी सुन्दरी
न वसुधा पर उतरी है,
और न उतरेगी।
नख से शिख तक तुम
लावण्य की
अप्रतिम सूरत हो।
अजन्ता की मूरत हो।
मधु में डूबे बैन,
कमल से नैन,
अधर पुहुप-पांखुरियों से,
ऐसा रूप कहां से लाई-
हो गोरी बतला दो।
मैं साधक हूं,
तुम हो साधना,
प्रतिदान दिलवा दो।
तुम राधा बन जाओ,
तुम्हारा मैं बन जाऊं माधो।

-286, स्नेहकुंज कॉलोनी
जौनपुर दक्षिण, कोटद्वार (गढ़वाल)

कीर्तिमान

■ पूनम गुजरानी

रात की गोदी
कोख की सूरज लिये
सहलाती रही
एक कतरा रोशनी
देती रही दिए को ओट
जागती रही साथ-साथ उसके।
विश्वास के धागों से
बांधकर रश्मिरथ
हांक दिया
धरती की ओर
निलाभ गगन चमकने लगा
चहुं ओर...।
धरती की आंखों से
सखि रजनी के लिए
छलके दो आंसू
पर वो जानती थी
मां अपना अस्तित्व लुटाकर ही
पैदा करती है
कोख से कीर्तिमान

-9-ए, मेघ सरमण अपार्टमेंट-1
सिटी लाईट, सूरत

गीत

■ डॉ. मोहन तिवारी 'आनंद'

मीत तुम कह दो ऐसा गीत।

जन-जन के अंतस की पीड़ा का जिसमें आभास नहीं
मानवीय अहसासों का जिसकी सांसों में वास नहीं।
उस कविता को न कविता न छन्द कहूं न गीत।
हर धड़कन मानवीय वेदना, सांस-सांस संगीत।
जो सांसों-सांसों में भरदे साजन मन सजनी की प्रीति
मीत तुम कह दो ऐसा गीत।

जिसके बोल-बोल को सुनकर होंठों पर थिरकें मुस्कानें,
अंतस की परतों-परतों में राग-रागनी छेड़े तानें।
जिसकी स्वर लहरी में बिंधकर मेघ-मल्हार सुनाएं,
जिसके रुक जाने से जैसे स्पंदन रुक जाएं।
मन को छूकर करे प्रफुल्लित कविता वही, वही है गीत।
मीत तुम कह दो ऐसा गीत।

जो कबीर की मैली चादर के धब्बे धो डाले,
जो अलगू-जुम्मन के मन से बैर-बुराई निकाले।
जो मोहन के मन मीरा सी प्रीति जगादे,
जो पापी-पाखण्डी को हरि मीत बनादे।
समझादे जो शक्ति शब्द की गादे ऐसा गीत
मीत तुम कह दो ऐसा गीत।

-सुंदरम बंगला, 50 महाबली नगर, कोलार रोड
भोपाल-462042 (म.प्र.)

अभिमान न कर

डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी

कुछ देख निरन्तरता मेरी
सागर निज पर अभिमान न कर।
सच है तेरा विस्तार बहुत
मैं तो हिमगिरि की धारा हूं।
अर्पण का भाव रहा संचित
आशाओं का मैं तारा हूं।
जल पी पी कर भी तू प्यासा
निज गहराई का गान न कर।
औरों पर चोट किया करता
तुझ पर भी हो क्या पायेगा।
लाभों के भ्रम में हानि करे
निज पर ही वो पछतायेगा।
सुजनों को धोखा दे दे कर
अवनत बन, निज उत्थान न कर।
हैं जो सजीव दृश्यावलियां
उनका संहारक बन आया।
है सुता सुनामी तेरे ही
सब सृजन विलय जिसमें पाया।
जिस सत्ता के आगे बौना
उससे तुलना-अनुमान न कर,
किस अर्थ रहा वो रत्नाकर
शोषक होकर है हर्षाया।
दो बूंद नहीं प्यासे को जल
खारापन अपना विक साया।
कुछ देख स्वयं के अवगुण भी
कोरा अपना गुणगान न कर।

-24-आंचल कॉलोनी, श्यामगंज, बरेली

विनय

कृपाशंकर शर्मा 'अचूक'

दुख में भी साथ तू है, सुख में भी साथ है
हम तो अनाथ है यहां, तू सबका नाथ है,
तेरी हजार आंख हजारों से देखता
सूरज औ चन्द्रमा तू सितारों से देखता
लाखों करोड़ हाथ, मेरे दो ही हाथ है
हम तो अनाथ है यहां, तू सबका नाथ है
आए हैं अकेले तो जायेंगे अकेले
वादा किया था भूल गए पड़के झमेले
छोड़ा ना साथ मेरा, रहो साथ-साथ है
हम तो अनाथ है यहां तू सबका नाथ है।
जो हो गया तुम्हारा जगत से न वास्ता
उसके लिए वो खोल दिया सारा रास्ता
चरणों में जब अचूक झुका तेरा हाथ है
दुख में भी साथ तू है, सुख में भी साथ है।

-38-ए, विजय नगर, करतारपुरा, जयपुर

चिंगारी

शम्भु चौधरी

हो अंधेरा कितना ही घना, प्रकाश लाना ही होगा।
हो अंधेरा कितना ही घना, दीपक जलाना ही होगा।
भले तड़पता हो अंधेरा, मेरी लौ से यदा-कदा,
आंखें मूंदते ही वह झूमता रहता सदा।
आज भी है अंधेरा, कल भी रहेगा सदा
पर चिराग को जलने के लिए
लड़ना होगा उससे सदा।
बस सोच लो-
तुम जल रहे हो... तुम जल रहे हो...
इस सोच के भय से ही,
कांप जायेगा अंधेरा सदा।
भले ही उसने बसा लिया हो साम्राज्य,
दुनिया में अपना सदा,
पर इक चिंगारी से भी कांप जायेगा वो सदा।
जागते रहो! जागते रहो! ठक! ठक! ठक!
बस इस शब्द चाप से ही,
चोर भाग जाता सदा।

-एफ.डी.-453/2, साल्टलेक सिटी
कोलकाता-700106

गज़ल

किशन स्वरूप

बे-सबब बेहद गुमां हो जायेगा
हौसला भी रायगां हो जायेगा

उसकी तारीफें ज़रा सी कम करो
वो उड़ेगा आसमां हो जायेगा

तुम चलो हम भी चलें वो भी चलें
देख लेना कारवां हो जायेगा
आंख का पानी तुम्हारा एक दिन
चुप रहोगे तो जुबां हो जायेगा

प्यार घर में ही नहीं तो देखना
ईंट गारे का मकाँ हो जायेगा

यार कुछ अहसान उसपै कम करो
वो नहीं तो बे-जुबां हो जायेगा

प्यार की तासीर ऐसी है 'स्वरूप'
जो ख़फा है महरबाँ जो जायेगा।

-108/3, मंगल पांडेय नगर
मेरठ (उ.प्र.)

खुशबुओं के दिन

डॉ. देवेन्द्र आर्य

जिन्दगी में दुख लिखा है
वक्त ने गिन-गिन,
तुम लिखो कुछ छन्द के
कुछ खुशबुओं के दिन।

चल रहे हैं रोज
नंगे पांव दुपहर में
छांव बतियाने लगी है
धूप के घर में साझ ढ़लते ही
अभावों की चुभी है पिन
तुम लिखों कुछ छन्द के
कुछ खुशबुओं के दिन।

अब कहां गोकुल
कहां वो कान्ह सा बचपन
जमुन-तट पर रास क्या
संत्रास भर जीवन
घोर तम में भी खिले पर
सुबह से पल-छिन
तुम लिखो कुछ छन्द के
कुछ खुशबुओं के दिन।

हम चले कितना बचा कर
नाग फणियों को
घूम फिर लौटती
बदनाम घड़ियों को
बोधि-तरु में भी पले हैं
नाग से दुर्दिन
तुम लिखो कुछ छन्द के
कुछ खुशबुओं के दिन।

-वाणी सदन, बी-98, सूर्यनगर
गाजियाबाद-201011 (उ.प्र.)

मैं खामोश हूं

पूनम माटिया

मैं खामोश हूं
न समझ कि मन में बात नहीं
सूरज छिपा है
न समझ कि वो है ही नहीं
असफल हुए इक बार, तो क्या
और भी मौके मिलेंगे आजमाने को
ख्वाब तो बुन, ए-दोस्त
कोशिश तो कर
ज़माने को दिखाने को
बांस के बीज
को भी लगते हैं कई वर्ष
कोपल निकले से पहले
ज़मीं के नीचे जड़ें फैलाने को

-मैरीके ब्यूटी कंसलटेंट
पॉकेट-ए, 90-बी, दिलशाड गार्डन,
दिल्ली-1100095

आंख मन की साख है

■ आचार्य विजय नित्यानंद सूरि

शास्त्र में कहा है- आंख से तो रूप का ग्रहण होता है, फिर उस पर राग-द्वेष करना–यह मन का काम है और मन आंखों में साथ जुड़कर ही अच्छे, बुरे विचारों का ताना-बाना बुनता है। कहावत है–संसार में दो चीजें महत्व की हैं–आंख और पांख। आंख यानी नेत्र। ये हमारे ज्ञान के प्रतीक हैं और पांख यानी चरण–ये हमारी गति और प्रगति के प्रतीक हैं। आंख मनुष्य के भावों को प्रकट करती हैं। आंखें, मन का दीपक हैं। शरीर का सौन्दर्य है और ज्ञान या बुद्धि की खिड़कियां हैं आंखें। आंख बिना जगत् सूना है।

संस्कृत की सूक्ति है-

यथा नेत्रं तथा शीलं यथा नासा तथा ऽर्जवम्।

आंखों के रंग-ढंग से मनुष्य के चरित्र का पता चलता है और नाक से वक्रता और सरलता की पहचान होती है। चालाक की आंखें अलग ढ़ंग की बिल्ली जैसी होगी, तो सीधे सरल भद्र परिणामी की आंखें गाय जैसी मासूम होगी। हिंसक आदमी की आंखें कुत्ते जैसी डरावनी होगी और चतुर बुद्धिमान की आंखें गीध जैसी पैनी गहरी होगी। आंखों से ही आदमी के चरित्र और स्वभाव का पता चल जाता है। इसलिए राजनीतिज्ञ और मनोविज्ञानी जब भी किसी से बात करते हैं तो उसकी आंखों और चेहरे को भी पढ़ते रहते हैं। क्योंकि शब्दों में धूर्त आदमी चालाकी कर लेता है। कपटी मीठी वाणी बोलता है। उसकी मीठी चिकनी चुपड़ी बातें सुनकर उसके भीतर छुपी कड़वाहट की आहट भी नहीं सुनाई दे सकती, परन्तु आंखें उसकी भीतरी उधेड़बुन प्रकट कर देती है। आंख मन की चुगली खा जाती है। आंख मन की साख (साक्षी) है। इसलिए कूटनीतिज्ञ चाणक्य का कथन है- जब तुम किसी से बात करो तो अपनी आंख नीची रखो, परन्तु जब वह तुम्हारे से बात करे तो अपनी आंखें उसकी आंखों में डालकर पढ़ो कि उसकी आंखें क्या कहती हैं। आंखें भीतर का भेद नहीं छुपा सकतीं। डॉक्टर रोगी को जीभ और आंखें देखकर रोग का पता लगा लेते हैं। खून की कमी का भी पता चल जाता है आंख देखकर।

तो मानव शरीर में आंखें इतनी महत्वपूर्ण हैं। इन आंखों का उपयोग केवल रूप देखने में ही नहीं, यह तो आंख का स्वभाव है। चक्खुस्स रूवं गहणं वयंति–रूप को, दृश्य वस्तु को देखना इतना भर काम है आंखों का, किन्तु आंखों से क्या देखा, कैसा देखा, किसको देखा यह सब विचारना एवं उनकी उपयोगिता का निर्णय करता है मस्तिष्क।

श्रीमद् भागवत में कहा गया है-

**हर नारी में मां का रूप देखो,
हर मां को भगवती कहो।**

स्मृत्योः शिरस्तव निवास जगत् प्रणामे
दृष्टि सतां दर्शनेऽस्तु भवत्तनूनाम्।

हे प्रभो! मेरा मन तो सदा आपके चरण-कमल की स्मृति में लगा रहे। मेरा मस्तक आपके निवास केन्द्र जगत् को प्रणाम करने में अर्थात् संतजनों का विनय करने में झुका रहे और मेरी दृष्टि सदा आपके जीवंत शरीर रूपी संतों का दर्शन करने में रमी रहे। क्योंकि भगवान आज साक्षात् हमारे सामने देहरूप में उपस्थित नहीं है। किन्तु उनकी प्रतिकृति में तो उनके मूर्तिरूप विग्रह को देख सकते हैं, भगवान की प्रतिमा अर्थात् भगवान का दिव्य स्वरूप। या तो हम उस रूप में भगवान के दर्शन कर सकते हैं या फिर भगवान के प्रतिनिधि भगवददेह स्वरूप संतों में ही भगवान का रूप देख सकते हैं।

भक्ति शास्त्र में कहा जाता है–प्रकृति का कण-कण भगवद् स्वरूप से आप्लावित है। भगवान कहां नहीं है, बस देखने वाली आंख चाहिए। अगर मन में भगवान की स्मृति है तो पत्थर की प्रतिमा में भी भगवान का स्वरूप मिलेगा और यदि मन में भगवान नहीं है तो भगवान स्वयं सामने आकर खड़े हो जायेंगे तब भी तुम उनके स्वरूप को नहीं पहचान पाओगे। भगवान कब, किस रूप में हमारे सामने आते हैं यह क्या पता? क्या जाने किस वेश में नारायण मिल जाए। इसलिए कुदरत के जलवे को, प्रकृति के हर स्वरूप को भगवद् स्मृति के साथ देखो। तो तुम्हारी आंखें अवश्य ही भगवान का दर्शन करेंगी और यही आंखों की सार्थकता है। उसी की आंखें सार्थक है जिसने इन चर्म चक्षुओं में भगवान का दिव्य रूप देखकर पवित्र बना लिया।

परन्तु इतनी उपयोगी और महत्वपूर्ण आंखों का लोग आज दुरुपयोग कर रहे हैं। इन आंखों से स्त्रियों का रूप देखते हैं। नारी जाति मां, बहन, बेटी का पवित्र रूप होती हैं परन्तु विकारी आंखें–उनको भोग की वस्तु के रूप में देखने लगती है। क्योंकि उसके मन में काम वासना की गदंगी भरी होती है। वह उसके सुंदर शरीर के अवयवों को देखकर चंचल और विकारग्रस्त हो जाते हैं। आज विज्ञापनों में, सिनेमाओं में स्त्रियों के खुले अंगों का, नग्न रूपों का प्रदर्शन कर विकारग्रस्त मानव समाज को दिग्भ्रमित किया जा रहा है। इसमें मातृ जाति का अपमान तो है ही, साथ ही पुरुष जाति को भी भ्रष्ट, पतित और कर्तव्यच्युत किया जाने की साजिश है।

कहा जाता है कि स्वामी रामकृष्ण बचपन से ही विकारमुक्त पवित्र हृदय वाले थे। उन्होंने प्रारंभ से ही अपने मन और आंखों को इस प्रकार प्रशिक्षित किया कि रुपया (टका-सिक्का) देखकर सोचते-यह मिट्टी है और नारी देह को देखने पर मन में आनंदमयी मां भगवती की कल्पना करते। एक बार मथुरा बाबू नाम के एक सज्जन ने स्वामीजी की इस उच्च चरित्र शीलता की परीक्षा लेने का मन बताया। रामकृष्ण उस समय 24-25 वर्ष के एक युवक थे। हृष्ट-पुष्ट सुंदर सलौना शरीर देखकर लोग उनके सौंदर्य पर ही मुग्ध हो जाते थे। एक बार मथुरा बाबू उन्हें कोलकाता के मछुआ बाजार में रहने वाली लक्ष्मीबाई नाम की वेश्या के घर पर ले गये। लक्ष्मीबाई को पूरी योजना पहले समझाई हुई थी। लक्ष्मीबाई ने रामकृष्ण को एक सुंदर सजे हुए कमरे में बिठाया और 15-16 सुंदर नौजवान लड़कियों को अर्ध नग्न अवस्था में एकत्र कर लिया। रामकृष्ण उस समय भी अर्ध नग्न अवस्था में रहते थे। शरीर के ऊपर केवल एक चादर लपेट कर रखते थे। अर्ध नग्न तरुणी वेश्याएं आकर रामकृष्ण के सामने नाचने लगीं, गाने लगीं और तरह-तरह के कामोत्तेजक हाव-भाव चेष्टाएं करने लगीं। ऐसी अवस्था में परमयोगियों के मन में भी चंचलता और विकार उत्पन्न हो जाता है। रामकृष्ण ने जैसे ही यह दृश्य देखा, उन्होंने हाथ जोड़कर आनंदमयी मां कहकर उन युवतियों को सिर नवाया और आंखें मूंदकर बस यही उच्चारण करते रहे। उनकी आंखों से प्रेमाश्रु बहने लगे। उनकी ऐसी स्थिति देखकर लक्ष्मीबाई और अन्य युवतियां भयभीत भी हुईं और रामकृष्ण के सामने क्षमा मांगने लगीं। रामकृष्ण हाथ जोड़कर सभी अर्धनग्न युवतियों को आनंदमयी मां कहकर सिर नवाते रहे। उनके शरीर पर एक रत्तीभर भी चंचलता और विकार का प्रभाव नहीं दिखाई दिया।

तो यह है आंखों को प्रशिक्षित करने की एक साधना। जब भी कहीं धन दिखाई दे तो समझो यह माटी है, जब भी कभी कोई नारीरूप दिखाई दे तो, समझो वह मां है। हर नारी में मां का रूप देखो, हर मां को भगवती कहो। क्योंकि दोनों ही पवित्र रूप हैं। मां की पवित्रता में भगवान स्वयं विराजमान हैं। इस प्रकार हमारी आंखें पवित्र रहेंगी और हम इन आंखों से अपने जीवन को सार्थक कर सकेंगे। ●

स्वास्थ्यवर्द्धक फल बेल

■ डॉ. उमेशचंद्र पाण्डेय

बेल या बिल्व एक अत्यंत उपयोगी फल है। चरक और सुश्रुत, दोनों ने बेल को उत्तम संग्रही निरूपित किया है। बेल को पाचन संस्थान के लिए उपयोगी माना गया है। बेल के उपयोग से आंतों की कार्यक्षमता बढ़ती है, कब्ज नहीं रहने पाता, भूख खुलती है और इन्द्रियों को बल मिलता है। चक्रदत्त बेल पुरानी पेचिश, दस्तों और अर्श रोग के लिए लाभकारी कहा गया है।

संसार में सबसे अधिक बेल के वृक्ष भारत देश में पाये जाते हैं और फलों में यह सबसे गुणकारी फल होता है। बेल फल का सूखा गूदा (कच्चा) पके फल से अधिक गुणकारी होता है।

वनस्पति विज्ञान की दृष्टि में बेल एगिल मारमीलॉस है, जो रूटेसी कुल के अंतर्गत आता है।

गर्मी की ऋतु आ गई है अब बेल बड़ी मात्रा में बाजार में आने लगे हैं। सस्ता एवं उपयोगी फल होने के कारण गरीब हो या अमीर सभी इसका उपयोग करते हैं।

पश्चिमी देशों में भी बेल के लाभकारी गुणों को पहचाना गया है। बेल की मज्जा में मूलत: ग्राही पदार्थ पाये जाते हैं। ये हैं–म्यूसिलेज, शर्करा, टेनिंस तथा पेक्टिन। बेल में पाया जाने वाला मुख्य रेचक संगठन है-''मामैलोसिन'' नामक रसायन, जो अल्प मात्रा में ही विरेचक है।

बेल फल में म्यूसिलेज काफी मात्रा में होता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि डायरिया (अतिसार) के तुरंत बाद घावों को भरने और

आंतों को स्वस्थ बनाने में यह म्यूसिलेज काफी लाभकारी होता है। म्यूसिलेज की उपस्थिति के कारण आंतों में मल संचित नहीं होने पाता और वे कमजोर भी नहीं होने पातीं।

होमियोपैथिक चिकित्सा पद्धति में बेल को खूनी अर्श (बवासीर) और पुरानी पेचिश (क्रॉनिक डिसेण्ट्री) के इलाज में गुणकारी माना जाता है।

कब्ज (कोष्ठबद्धता) दूर करने में भी बेल सबसे अधिक उपयोगी है। यह कोष्ठ को साफ करता है और उसे सजीव बनाता है। बेल के दो-तीन सप्ताह के प्रयोग से आंतों में चिपका पुराना मल भी साफ होने लगता है। इसीलिए पुराना कब्ज भी टूट जाता है।

यदि दो बड़े कच्चे बेल लेकर उन्हें तोड़ने के बाद आग में भून लिया जावे और थोड़ी-सी खांड (शक्कर) मिलाकर दिन-रात में जब भूख लगे, यही बेल खाया जाय तो संग्रहणी (पुरानी पेचिश) में तत्काल फायदा होता है। बेल के इस प्रकार सेवन करने से पहले रक्त और दस्त की मात्रा कम होगी और अंतत: दस्तों और खून का आना भी बंद हो जाएगा।

बेल के उपरोक्त गुणों की जानकारी का फायदा शहरों में रहने वाले अधिकांश लोग, जो अतिसार, प्रवाहिका (डिसेन्ट्री) संग्रहणी तथा कब्ज के रोगी होते हैं, कैसे प्राप्त कर सकते हैं? शहरों में बेल मिलना बहुत कठिन होता है। अब कुछ आयुर्वेदिक संस्थानों में बेल का चूर्ण तैयार किया जाने लगा है। बेल का चूर्ण बनाने के लिए बाजार से सूखा बेल लेकर, उसे भलीभांति कूट-पीसकर कपड़े से छानकर रख लिया जाता है। इसे सुविधानुसार ठण्डे पानी के साथ, थोड़ी मात्रा में खांड (शर्करा) मिलाकर प्रयोग में लाने से भी कब्ज से छुटकारा मिल जाता है। बेल के शर्बत का प्रयोग प्रात: समय या दिन के तीसरे पहर करना चाहिए।

आयुर्वेद में आषाढ़ माह में बेल का प्रयोग वर्जित माना जाता है।

अब बाजार में बेल का मुरब्बा आसानी से मिल जाता है। जो लोग बेल फल की व्यवस्था न बना सकें उन्हें बेल के मुरब्बे के प्रयोग से लाभ उठाना चाहिए।

उपरोक्त से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि बेल, ग्रीष्म ऋतु में पेट के समस्त रोगों के लिए वरदान है। बेल के नियमित एवं उचित मात्रा में प्रयोग से कब्ज, अतिसार, अर्श, संग्रहणी, प्रवाहिका आदि रोगों में अप्रत्याशित लाभ होता है। बेल एक मौसमी फल है और इसका प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। ●

प्रेक्षाध्यान: सांसों की भाषा का विज्ञान

■ डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'

धार्मिक जगत की मान्यता के अनुसार प्राणीमात्र के देह में जितनी सांस भरी रहती है, उतनी ही सांस लेने का अधिकारी होता है। सांसों का खजाना समाप्त होने पर इस संसार से अलविदा हो जाता है। मनुष्य संसार का श्रेष्ठ व चतुर प्राणी माना जाता है। अपनी बुद्धि विवेक के द्वारा प्रत्येक कार्य को बड़ी चतुराई व निपुणता से करने में सक्षम होता है। धन की सुरक्षा व उसका उपयोग बड़ी सूझ-बूझ से करता है किन्तु अपनी सांसों के खजाने का सही उपयोग करना कितने व्यक्ति जानते हैं। उदाहरण के रूप में कुत्ता स्वभाव का क्रोधी व ईर्ष्यालु प्राणी है अपने क्षेत्र में किसी अनजान अपरिचित कुत्ते को देखते ही आगबबूला होकर उस पर टूट पड़ता है व घंटों भौंकता रहता है, क्योंकि उसे वह फूटी आंखों से नहीं सुहाता। उसके श्वासों की गति तीव्र होती है, जल्दी-जल्दी सांस लेकर अपने खजाने को समाप्त कर अल्प आयु (10-15 वर्ष) में मर जाता है जबकि शांत स्वभाव का प्राणी कछुआ बहुत मंद गति से धीरे-धीरे सांस लेता है और बहुत लम्बी आयु प्राप्त करता है।

मनुष्य जाति अगर इन प्राणियों के उदाहरण से शिक्षा लें और अपने को शांत, सरल व सहज जीवनशैली से भावित कर श्वास प्रेक्षा के द्वारा लम्बे व गहरे श्वास लेने की आदत डाले तो अपने आयुष्य की अवधि को लम्बा खींच सकने में सक्षम बन सकता है। प्रेक्षाध्यान सांसों की सुरक्षा का अच्छा माध्यम बन सकता है। अपने श्वासों के अंदर का सही उपयोग कर शांत जीवन जीने की कला का नाम है 'जीवन विज्ञान' यानी जीने की कला।

–जयश्री टी कंपनी,
चौधरी बाजार, नंदीशाही,
कटक (उड़ीसा)

जहां घरों में किवाड़ नहीं लगाये जाते

■ डॉ. रश्मि रेखा

ऊं शन्नो देवी रमिष्टयऽआपो भवंतु, पीतये।
शंयोरमिसुवन्तु नः। श्री शनैश्चराय नमः।

शनि के लिए विहित इस वैदिक मंत्र में ग्रह प्रभाव की शांति के लिए शक्ति पूर्ण सरल विधान वर्णित है। शनिदेव के उद्‌भव और प्रभाव के संदर्भ में अनेक पौराणिक संदर्भ मिलते हैं। शनिदेव की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने वरदान दिया था कि कलियुग में तुम्हारा ही संपूर्ण प्रभाव रहेगा। नवग्रहों में जो स्थान तुम्हारा होगा वह किसी अन्य ग्रह का नहीं हो सकेगा। तुम्हारे अनुग्रह मात्र से सारे भौतिक सुख प्राणियों को मिलेंगे और तुम्हारे प्रतिकूल होते ही सब कुछ नष्ट हो जाएगा। महाराज दशरथ द्वारा की गयी प्रार्थना से प्रसन्न होकर शनिदेव ने उनके राज्य में कभी दुर्भिक्ष न पड़ने का वरदान दिया था...। अपनी मां के क्रोध से शनिदेव को पैर टेढ़ा होने का श्राप मिला है। सूर्य-पुत्र शनिदेव नवग्रह मंडल में 'सेवक ग्रह' के रूप में गिने जाते हैं। सौर मंडल के सबसे अधिक ऊंचाई पर स्थित यह ग्रह मंदगामी ग्रह है। 'शनैःचर' अपनी मंद गति के कारण ही इस ग्रह का नाम 'शनि' पड़ा है।

विज्ञान के अधुनातन युग में भी ग्रह शांति के लिए असंख्य पीड़ित प्राणी किन्हीं-किन्हीं उपायों की खोज में भटकते दीखते हैं और शनि के अशुभ प्रभावों की पीड़ा तो मरणांतक कष्टकारी मानी गयी है। ऐसे ही संकटग्रस्त मनुष्यों की शनि पीड़ा दूर करने वाला विलक्षण देवस्थान है- श्री क्षेत्र शिंगणापुर का 'स्वयंभू देवता' शनि का तीर्थस्थान।

महाराष्ट्र की तीर्थ नगरी 'शिरडी' की सीमा छूते ही 'शनि शिंगणापुर' चलो शिंगणापुर की स्वर ध्वनियां आनेवाले भक्तों को सुनायी देती हैं और शिरडी जाने वाले भक्त श्री क्षेत्र शिंगणापुर जाने के कौतूहल को रोक नहीं पाते जहां शनि का क्षेत्र है। शनि की स्वयंभू मूर्ति है। देव है पर देवालय नहीं। शनि भगवान के अनेक चमत्कारों से भरा यह क्षेत्र वहां पहुंचनेवालों को स्वतः

प्रभावित कर देता है। दूर-दूर से भक्त यहां मनौती मानने आते हैं और शनि की बाधा से मुक्ति पा लेते हैं। संतों की पावन भूमि महाराष्ट्र के जिला अहमद नगर के शिंगणापुर गांव में शनि की 'स्वयंभू' मूर्ति एक विशाल चबूतरे पर स्थापित है। मूर्ति 5.9'' ऊंची और 1.6'' चौड़ी है। इस क्षेत्र का विलक्षण महत्व है कि मूर्ति खुले चबूतरे पर है। अष्ट प्रहर बिना किसी छत्रछाया के शनि भगवान विराजमान है...। कहा जाता है कि कई बार लोगों ने मूर्ति के ऊपर छत्र लगाने के प्रयास किये किन्तु सभी व्यर्थ रहे... इतना ही नहीं चबूतरे के समीप स्थित नीम के पेड़ की कोई डाली भी जब कभी मूर्ति के ऊपर आयी वह या जो जल गयी या टूट गयी, मानो शनि भगवान स्वयं साक्ष्य देते हैं कि मेरे ऊपर किसी भी छाया की आवश्यकता नहीं है। इस शनि क्षेत्र का विलक्षण चमत्कार देखने को मिला कि इस परिसर में कभी चोरी नहीं होती। कहा जाता है कि यदि कभी किसी ने चोरी का प्रयास भी किया तो वह अंधा बन गया अथवा शनि परिसर में जब तक भटकना रहता है तब तक स्वयं भगवान से क्षमा याचना न कर ले। पूरे विश्वभर में शिंगणापुर श्री शनि क्षेत्र का ही वैशिष्ट्य है कि यहां किसी भी घर में किवाड़ नहीं लगाये जाते... यहां तक कि लोग ताले तक भी नहीं लगाते... पुराने कच्चे अथवा नयी तकनीक से बने सीमेंट के मकानों में भी किवाड़ नहीं है...। मकानों, होटलों व दुकानों के नाम भी श्री शनि भगवान के नाम पर ही रखे जाते हैं..। 'श्री शनैश्चराय नमः', ''श्री शनि की कृपा', 'सूर्य पुत्र स्टोर' आदि।

समस्त ग्रहों में शनि क्रूर ग्रह है। अतः शनि देव को भी सौम्य नहीं माना जाता। वे कठोर और निर्मोही देव कहे गये हैं। शिंगणापुर स्वयंभू देवता की पूजा और दर्शन का भी विशेष महत्व है। महाराष्ट्र से ही नहीं पूरे देशभर से अनेक भक्त यहां आते हैं... भक्तों को लूटने वाले पंडे-पुजारी यहां नहीं हैं। पूजा की विधि भी विलक्षण है मानो शनि देवता के आदेशानुसार ही ऐसा विधान है। शनि के चबूतरे में ऊपर जाकर दर्शन करने की अनुमति स्त्रियों को नहीं है। वे चबूतरे के नीचे से ही दर्शन कर सकती हैं। इसके अतिरिक्त पूजा के लिए जानेवाले भक्त गीले वस्त्रों में जाकर शनि का अभिषेक व पूजन करते हैं। मंदिर के समीप ही बावड़ी और नल की व्यवस्था की गयी है। पूजा के लिए गेरुआ वस्त्र भी वहीं से उपलब्ध कराया जाता है। उन्हीं गीले वस्त्रों को पहनकर सभी पुरुष, यहां तक कि छोटे लड़के भी पूजन कर पाते हैं। पूजा अभिषेक के जल के लिए एक पृथक कुआं है। स्त्रियां इस जल को भी स्पर्श नहीं करतीं...। क्रूर ग्रह शनि के लिए यह स्नेह निर्माण की परम्परा है। अतः तेल से अभिषेक किया जाता है। भक्ति भावना से पूजा और स्नेह निर्माण से शनि देव संतुष्ट होते हैं। इसी मान्यता से शनि अमावस्या गुदी पाडवा (चैत्र प्रतिपदा) के अवसर पर यहां यात्रा का स्वरूप रहता है। शिवजी के कांवड़ियों की भांति गुदी पाडवा के अवसर पर कांवड़ियों की यात्रा चलती है। भक्तगण गोदावरी से गंगोदक लाकर शनि भगवान को स्नान कराते हैं।

श्रीक्षेत्र शिंगणापुर में मुख्य दैवत श्री शनि भगवान का है, जहां भक्तों की श्रद्धा एवं पूजा मनौती से शनि देव प्रसन्न होते हैं एवं कष्ट निवारण करते हैं। यह चमत्कारी क्षेत्र 'शनि' की बाधा दूर करने के लिए सिद्ध पीठ के रूप में प्रसिद्ध है... यहां आकर ही शनि के चमत्कार की अनुभूति स्वतः मिलती है और शनिदेव के दर्शन पूजन से शनि के कष्ट निवारण का सरल सहज उपाय भी।

-प्राचार्य, आ.डी.पो.ग्रे. कॉलेज
महामाया नगर, हाथरस (उ.प्र.)

पुरुषार्थ के द्वार पर सफलता की दस्तक

■ मंजुला जैन

जीवन की तीन अवस्थाएं हैं–बचपन, यौवन और बुढ़ापा। जीवन की सफलता के भी तीन पैरामीटर हैं–समय, समझ व श्रम। बचपन में समय होता है पर समझ व श्रम नहीं। बुढ़ापे में समय व समझ दोनों होते हैं पर वृद्ध श्रम नहीं कर सकता। अत: सफलता बच्चे व वृद्ध दोनों से दूर रहती है। यौवन एक ऐसी अवस्था है जहां समझ भी है, युवा श्रम भी कर सकता है पर आज के युवाओं के पास शायद समय नहीं है। मैं समाज की युवा बहिनों की ओर आशाभरी नजरों से देखती हूं क्योंकि उनके पास समय, समझ व श्रम तीनों हैं अत: वे सफलता की सही अधिकारी हैं। अपेक्षा है सम्यक् नियोजन की, व्यापक सोच की एवं कुछ नया करने की ललक की।

भारतीय संस्कृति श्रमप्रधान रही है। आज पूर्वी संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति की पदचाप सुनाई दे रही हैं। खेद है हमारी नवयुवतियां एवं बहनें भी सुविधावाद की ओर गति कर रही हैं। सुविधाओं के कारागार में श्रम ही नहीं बल्कि हमारी रचनात्मकता एवं सृजनात्मकता भी कैद होती जा रही है। प्रश्न होता है सुविधावाद ने हमें क्या दिया? आचार्य श्री तुलसी के शब्दों में–

खुला निमंत्रण है आमय को
जीना हो आरामतलब।
रक्तचाप मधुमेह पीनता
हार्टट्रबल होता जब तब।।

कितनी सटीक है ये पंक्तियां। सुविधावादी जीवनशैली ने हाई ब्लडप्रेशर, डायबिटीज, मोटापा

व हार्टट्रबल इत्यादि रोगों को जन्म दिया है। शारीरिक स्वस्थता का सुंदरतम राज है–श्रमप्रधान शैली। अपने श्रम से अर्जित सूखी रोटी भी पराए पकवानों से कहीं अधिक स्वादिष्ट होती है। पत्थर पर गिरे पसीने की चमक नगीने से कहीं अधिक होती है। श्रम से शारीरिक विषों का निष्कासन होता है। स्फूर्ति व प्रसन्नता का जन्मदाता है–पुरुषार्थ। कहा भी है–

यदि काम करते रहो अच्छा रहता अंग।
पड़े-पड़े औजार को लग जाता है जंग।।

शरीर रूपी मशीन का प्रत्येक पुर्जा चलता हुआ ही शोभित होता है।

मानसिक स्वस्थता को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है–शारीरिक स्वस्थता की। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। मानसिक स्वस्थता का अर्थ है–सम्यक् सोच, विधेयात्मक सोच। सरल शब्दों में कहूं तो–दु:ख में से सुख ढूंढने की कला। आपके विचार जितने उदार व पवित्र होंगे, आप व आपका परिवार उतना ही अधिक स्वस्थ होगा। मानसिक स्वस्थता की सुदृढ़ नींव है–प्रेक्षाध्यान, दीर्घश्वास प्रेक्षा व योगासन की त्रिपदी। इस त्रिपदी के सिन्धु में छिपा है–स्वस्थता का अमृत।

मारवाड़ी में कहावत है–घी घाल्याड़ो अंधेरे में ही छानो कोनी रेवै। याद रखें–''दाएं हाथ में पुरुषार्थ है और बाएं हाथ में सफलता''। इतिहास साक्षी है–पुरुषार्थ के द्वार पर हर कदम सफलता दस्तक देती रही है। पुरुषार्थ भाग्य का विधाता है। अकर्मण्यता कायरों की जननी है। अच्छे भाग्य का निर्माण आलस्य से नहीं, श्रम से होता है। दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदलने वाला यदि कोई नियामक तत्त्व है तो वह है–पुरुषार्थ। भाग्यवादी स्वर्णिम अवसरों को खो देता है जबकि पुरुषार्थी अवसरों को खींचकर अपने पास ले आता है आचार्य श्री महाप्रज्ञ के शब्दों में–कल का पुरुषार्थ ही आज का अच्छा भाग्य है और आज का पुरुषार्थ ही कल का अच्छा भाग्य होगा।

युवा बहिनों आपकी भुजाओं में सौभाग्य है। अत: अपेक्षा है–समय का सही नियोजन कर, सम्यक् समझ का विकास कर श्रम की पगडंडियों पर चलकर सफलता हासिल करें। श्रम की पगडंडियों पर चलने वाला ही भविष्य में सफलता के राजमार्ग पर चरणन्यास कर सकता है। ●

घंटाकर्ण का महत्व

भारतीय तंत्र साहित्य में घंटाकर्ण का स्थान विशेष है, क्योंकि ये देवताओं के प्रधान सेना कार्तिकेय के तृतीय सहायक सेनापति थे। श्री घंटाकर्ण स्तुत्य देव हैं। इनकी तुलना क्षैत्रपाल, भैरव और हनुमान जैसे देवों के सदृश की गई है।

वास्तव में इनकी मांत्रिक एवं तांत्रिक दोनों शक्तियां इतनी शीघ्र प्रभावशाली हैं, जिसे देख स्वयं साधक भी आश्चर्यचकित हो उठता है। एक विशाल घंटे के मध्य भाग में धनुष पर तीर चढ़ाए हुए तरकस और ढाल को पीठ पर धारण किए कमर की बायीं ओर छुरियां तथा दाहिनी ओर खड्ग और भुजाओं पर घंटे का भुजबंध पहने सौम्य एवं शांत प्रकृति के साथ ही वीरत्व की विलक्षण आभा लिए प्रतिमा चित्र श्री घंटाकर्ण महावीर के नाम से जाना जाता है।

देवताओं के कोषाध्यक्ष कुबेर ने अपने आपको सर्व ऐश्वर्य संपन्न बनाने क लिए भगवान पशुपतिनाथ से घंटाकर्ण यंत्र का रहस्य समझा था। ऐसे धनपति कुबेर जो स्वयं साक्षात धन-दौलत और ऐश्वर्य के पर्याय हैं, ने घंटाकर्ण यंत्र का रहस्य समझा था। इसी बात से आप इस यंत्र के महत्व को समझ सकते हैं। इस सुख-समृद्धि, ऐश्वर्य प्रदाता घंटाकर्ण यंत्र का उपयोग कर 'श्री घंटाकर्ण यंत्र पिरामिड' का निर्माण भी किया गया है, जो अपने आप में अद्भुत है। इस यंत्र पिरामिड के उपयोग से सभी प्रकार की सुख-समृद्धि और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। जीवन में कम-से-कम एक बार तो इसे अवश्य ही आजमाना चाहिए।

प्रस्तुति : विनोद किला, दिल्ली

भगवान स्वामिनारायण

■ महेन्द्रकुमार जैन 'भगतजी'

अक्षर पुरुषोत्तम स्वामिनारायण का जन्म 3 अप्रैल 1781 को उत्तर भारत के छविया गांव में रामनवमी के दिन हुआ। आप स्वयं करुणा की गंगोत्री थे और बाल्यकाल से ही आपके अंदर अवतारी प्रतिभाशाली महापुरुष के लक्षण प्रगट होने लगे थे। आपके पिताजी का नाम धर्मदेव था और आ. सं. 1837 चैत्र शुक्ला नवमी के मंगल दिन रात्रि के समय मां भक्ति की कोख से आपने इस धरा पर अवतरण किया। धर्म निरत, पवित्र दंपति की व्रत-उपवास, भक्ति और साधना की एकाग्रता से प्रसन्न होकर स्वयं भगवान पुरुषोत्तम नारायण ने आशीर्वाद दिया था, ''मैं स्वयं तुम्हारे घर पुत्र के रूप में जन्म लूंगा। अधर्म का ह्रास करके धर्म का उदय करूंगा।'' सामुदायिक शास्त्र के अनुसार बालक के शरीर पर तथा दोनों चरणों में ऐसे प्रभावक चिन्ह थे, जिससे ज्योतिषियों तथा मनीषियों की भविष्यवाणी थी, ''धर्मदेव का यह बालक सर्वथा विलक्षण एवं प्रतिभावान पुत्र है।'' आपके बचपन का नाम घनश्याम था और आपके परिवार के पुरोहित हरिकृष्ण उपाध्याय ने आपको आठ वर्ष की आयु में फाल्गुण शुक्ला दशमी को यज्ञोपवीत संस्कार दिए। आपने दस वर्ष की आयु में अपने पिता के पास रहकर वेद, उपनिषद, गीता, महाभारत, तुलसीकृत, रामायण आदि का पठन-पाठन, चिंतन-मनन किया। आपके पिता धर्मदेवजी ने काशी में विद्वत-परिषद की अध्यक्षता की ओर आपने संस्कृत भाषा में विद्वानों की सभा में सारग्रही प्रवचन दिया कि सभी उच्च कोटि के विद्वानों ने आप दोनों की जोरदार सराहना करते हुए आपको अंत:करण से हार्दिक बधाई दी। जब आपने ग्यारहवें वर्ष में प्रवेश किया तो केवल सात महीने के अंतराल में आपके माता-पिता का देहांत हो गया। मरने से पहले अपने लाडले पुत्र घनश्याम का सिर अपनी गोद में रखते हुए अपने ज्येष्ठ पुत्र से कहा था, ''बेटा घनश्याम को बड़े प्यार से संभालना। वह अलौकिक और दिव्य विभूति है। स्वयं परब्रह्म है, संसार में तनिक भी रुचि नहीं है। मुझे तो लगता है कि यह हमारे परिवार के लिए नहीं, पूरे विश्व परिवार के लिए ही इस धरातल पर आया है।''

घनश्याम मात्र ग्यारह वर्ष सात माह तथा एक दिन की उम्र में रात्रि के तीसरे प्रहर के बाद गरजते हुए और बूंदाबांदी कर रहे बादलों के छांव में हिमालय की ओर जाने के लिए घर से निकल पड़े। अब घनश्याम ने आज से अपनी पहचान इस नाम के साथ बदल डाली, वे अब से नीलकंठ ब्रह्मचारी नाम से प्रसिद्ध होने लगे। उनका कहना है, ''जब हम घर छोड़कर निकले, तब तो एक वस्त्र भी अधिक रखना पसंद नहीं था। वन-जंगल का निवास ही मुझे रुचिकर लगता और भय तो किसी से भी नहीं लगता था। भयंकर जंगलों में हमने बड़े-बड़े सर्प, सिंह, हाथी इत्यादि अनंत पशु देखे लेकिन मृत्यु का भय तो हमें तनिक भी नहीं लगा। ऐसे महावन में भी हम सर्वदा निर्भय होकर रहते थे। नगाधिराज हिमालय के प्रवेश का संभव हरिद्वार से होता है, ब्रह्मचारी ने हरिद्वार में शिवजी की सेवा पाकर श्रीपुर का मार्ग पकड़ लिया। आपने श्रीनगर में कदम रखा था कि संध्या ढल चुकी तो आपने एक छोटे से मठ के सामने पेड़ की छांव में आसन जमाकर निजस्वरूप के ध्यान में निमग्न होकर स्थिर चित्त होकर बैठ गए।

अचानक शेर की दहाड़ सुनाई दी, पंख फड़फड़ाते हुए पंछियों ने अपने घोंसले छोड़ दिए और शोर मचाने लगे। मठ के महंतजी ने ब्रह्मचारीजी से बोला, शीघ्रता से उठो, मठ के अंदर चलो। अभी-अभी शेर की दहाड़ सुनाई दी है। यदि आप मठ के अंदर आना नहीं चाहते, तो पास के गांव में चले जाइए। यहां बाहर मौत का भय है। ब्रह्मचारीजी ने कहा कि आप व्यर्थ का कष्ट उठा रहे हैं। मेरा व्रत है कि मैं गांव में नहीं जा सकता और मैं मौत से कभी नहीं डरता। महंतजी मठ के अंदर चले गए। थोड़ी देर में दहाड़ता हुआ एक विकराल शेर ब्रह्मचारीजी के सामने आ गया और शांत होकर एक पालतू कुत्ते की भांति ब्रह्मचारीजी की गोद में आकर बैठ गया। ब्रह्मचारीजी कई घंटे तक शेर की पीठ पर हाथ फेरते रहे। पौ फटने पर नीलकंठ स्नान विधि के लिए खड़े हुए तो सिंह भी साथ चलने लगा। नीलकंठ ने उसे संकेत किया और एक ही छलांग में सिंह गहन झाड़ियों में अदृश्य हो गया। गुप्त काशी से उन्होंने त्रियुगीनारायण के कठिन मार्ग से केदारनाथ की यात्रा की। मुक्तनाथ से उतरकर नेपाल की भूमि के पहाड़ी इलाकों से गुजरते हुए महाप्रभु नीलकंल ने भीषण जंगलों में प्रवेश किया। इसी वन में गोपालयोगी नामक अष्टांग योगी से उनकी भेंट हुई। नीलकंठ ने इस योगी के पास रहकर एक वर्ष अष्टांग योग की कठिनतम साधना सिद्ध की और योगीजी को ब्रह्म ज्ञान का उपदेश दिया और उनको आत्मस्वरूप का ज्ञान करवाकर स्व स्वरूप का साक्षात्कार कराया। नीलकंठ का आगमन सन् 1797 के कार्तिक मास में आसाम के सीमावर्ती मातृ तीर्थ कामाक्षी में हुआ। इसके बाद आपने दक्षिण भारत के सभी जाने-माने तीर्थों के दर्शन करने के बाद तोताद्रि में रामानुजाचार्य की न्यासपीठ के भी दर्शन किए।

अयोध्या की आसाढ़ रात्रि से प्रारंभ हुई यात्रा श्रावण मास के प्रात:काल समाप्त हुई जिसमें करीब 7 वर्ष, 1 माह, 11 दिन व्यतीत हुए। ग्यारह वर्ष का सुकोमल बालक घनश्याम अब अठारहवें वर्ष में नीलकंठ ब्रह्मचारी के रूप में भारत वर्ष के अध्यात्म विरासत के तेज पुंज की भांति देदीप्यमान प्रतिष्ठित हो चुके थे। जिसमें उन्होंने करीब 13,000 किलोमीटर की पैदल यात्रा नंगे पांव तथा बिना वस्त्र एकाकी रहकर 2562 दिनों के सुदीर्घ प्रवास में भारत, चीन, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान और बर्मा तक के 7 देशों में विचरण करके पूरी की।

दिनांक 28-10-1800 को रामानंद स्वामी ने विराट जनमेदिनी के जयघोष के साथ नीलकंठ ब्रह्मचारी को वैष्णवी दीक्षा देकर सहजानंद स्वामी और ''नारायण मुनि'' दो नाम से विभूषित किया। उसी दिन से स्वामी सहजानंदजी को गुजरात के गांव-गांव व नगर-नगर में 'भगवान स्वामिनारायण' के नाम से लोग पहचानने लगे और सत्संगी के हर घर में नाद गुंजने लगा 'स्वामिनारायण, स्वामिनारायण।' भगवान स्वामिनरायण ने हजारों गांवों/शहरों में घूम-घूम कर अंधविश्वास और कुप्रथाओं का खात्मा करके सत्य, अहिंसा, वात्सल्यता, समानता, ब्रह्मचर्य, वीतरागता, प्रेम, दीन-दुखियों, अभावग्रस्तों की निष्काम सेवा आदि का शंखनाद और प्राचीन भारतीय संस्कृति का सिंहनाद किया। सन् 1830 में केवल 49 वर्ष की अल्प आयु में आपने अपनी लीला समेट ली। संपूर्ण मानवजाति के कल्याण व उत्थान के लिए भगवान स्वामिनारायण के प्रबोधित प्राचीन वैदिक आदर्शों के सुख-शांति के आदर्शों के प्रचार-प्रसार के लिए ब्रह्म स्वरूप शास्त्रीजी महाराज ने सन् 1907 में बोचासणवासी श्री अक्षर पुरुषोत्तम स्वामि नारायण संस्था की स्थापना की।

-आर-1/166, सेक्टर-1, राजनगर
गाजियाबाद-201002 (उ.प्र.)

राष्ट्रीय पेय बन गई है चाय

■ **श्रीगोपाल नारसन**, एडवोकेट

चाय ने दूध को मात दे दी। चाय के सर्वाधिक उपयोग और इसकी महत्ता को देखते हुए चाय को राष्ट्रीय पेय का सम्मान दिया जा रहा है। यानी अब चाय हमारा राष्ट्रीय पेय होगा। जिससे दूध दूसरे स्थान पर पहुंच गया है। दरअसल चाय की विभिन्न वैरायटियों ने चाय को दूध से ज्यादा महत्वपूर्ण बना दिया। दूध की चाय, नींबू की चाय, बिना दूध की चाय, बिना शक्कर की चाय, इलायची वाली चाय, तुलसी वाली चाय, गर्म मसाला वाली चाय, केसर वाली चाय और ठंडी चाय के अलग-अलग स्वाद ने लोगों का मन मोह लिया और चाय दूध से भी ज्यादा उपयोग की जाने लगी। इसी कारण चाय को राष्ट्रीय पेय घोषित किया जा रहा है। जिसकी घोषणा 17 अप्रैल सन् 2013 में की जाएगी। यह दिन इसलिए चुना गया क्योकि चाय का पहला पौधा आसाम में मणिराम दीवान ने उगाया था जिनकी 17 अप्रैल सन् 2013 को 212वीं जयन्ती है। मणिराम दीवान को सन् 1857 की आजादी का बिगुल बजाने पर अंग्रेजो ने फांसी पर चढवा दिया था।

एक समय था जब उत्तराखण्ड के कुमाऊं जंगलों में चाय के पौधे खरपतवार की तरह

लावारिस रूप में उग आते थे। जगंली घास समझकर इन चाय के पौधों का कोई उपयोग भी नहीं करता था। लेकिन जब सन् 1823 में आसाम की धरती पर चाय की जंगली पौधों की खोज होने के बाद बिशप हेलर नामक सैलानी सन् 1824 में हिमालय क्षेत्र की यात्रा पर उत्तराखण्ड क्षेत्र में आया और उन्होंने कुमाऊं के जगंलों में खड़े लावारिस चाय के पौधों को देखा तो उन्होने यहां चाय की खेती संभावना व्यक्त की। उन्होंने उत्तराखण्ड के भौगोलिक स्वरूप व जलवायु को चाय की खेती के अनुकूल मानते हुए लोगों को उत्तराखण्ड में चाय की खेती की सलाह दी।

उत्तराखण्ड के चिंतक रमित जोशी की माने तो सैलानी बिशप हेलर द्वारा चाय की खेती के बाबत दिए गए सुझाव को कार्य रूप में लाने के

लिए सहारनपुर के तत्कालीन सरकारी बोटेनिकल गार्डन चीफ डाक्टर रायले ने तत्कालीन गर्वनर जनरल विलियम बेंटिंग से उत्तराखण्ड पर्वतीय क्षेत्र में चाय का उद्योग विकसित करने के लिए सरकारी स्तर पर प्रयास करने का अनुरोध किया। जिस पर सन् 1834 में चाय उद्योग के लिए एक कमेटी का गठन किया गया और सन् 1835 में इस कमेटी के माध्यम से चाय के दो हजार पौधा कोलकाता से उत्तराखण्ड के लिए मंगाए गए। जिसे कुमाऊं क्षेत्र के अलमोड़ा में भरतपुर ले जाकर रोपित किया गया। यही चाय की नर्सरी बनाकर चाय की खेती का विस्तार कुमाऊं के साथ-साथ गढ़वाल क्षेत्र में भी किया गया।

अनुकूल जलवायु एवं चाय की उन्नत खेती तकनीक के चलते उत्तराखण्ड में जो चाय पैदा हुई वह गुणवत्ता की दृष्टि से लाजवाब थी तभी तो सन् 1842 में चाय विशेषज्ञ द्वारा उत्तराखण्ड की चाय को आसाम की चाय से श्रेष्ठ घोषित किया गया। इंग्लैण्ड में भेजे गये उत्तराखण्ड की चाय के नमूनों को भी गुणवत्ता की दृष्टि से दुनिया भर की चाय से श्रेष्ठतम माना गया। जिससे उत्साहित होकर सरकारी प्रोत्साहन के बलबूते उत्तराखण्ड की धरती पर सन् 1880 तक चाय की खेती का विस्तार 10937 एकड़ क्षेत्रफल तक पहुंच गया और चाय के 63 बागानों के रूप में चाय की उन्नत खेती की गई।

भले ही चाय उत्पादन के क्षेत्र में उत्तराखण्ड दार्जलिंग और असम की तरह चर्चित न हो लेकिन उत्तराखण्ड की आर्थोडाक चाय आज भी दुनिया की सबसे महंगी चाय में शुमार है। अमेरिका, नीदरलैण्ड और कोरिया समेत दुनिया भर के कई देशों में उत्तराखण्ड की चाय को लोग हाथों-हाथ लेते है। 1200 मीटर से 2000 मीटर की उंचाई पर उगाई जाने वाली आर्थोडाक चाय जिसे जैविक चाय भी कहा जाता है को चाय के पौधों पर आने वाली पहली दो कोमल पत्तियों को कली के साथ तोड़कर एक दिन के प्रोसिस से तैयार किया जाता है। अल्मोड़ा के दिवान नगरकोटी ने बताया कि उत्तराखण्ड की चाय की सर्वाधिक कीमत विदेशों में मिलती है। उन्होंने जानकारी दी कि आर्थोडाक चाय का आयात लगभग दस हजार प्रति किलोग्राम की दर से किया जा रहा है। एक वर्ष में आर्थोडाक चाय की पैदावार करीब डेढ़ लाख किलोग्राम होने का अनुमान है।

उत्तराखण्ड चाय बोर्ड के निदेशक डी. एस. गर्ब्याल ने भी स्वीकारा की उत्तराखण्ड की आर्थोडाक चाय का दुनिया भर में कोई मुकाबला नहीं है। लेकिन उत्तराखण्ड में चाय का बाजार विकसित न होने, यातायात संसाधनों की कमी और चाय के बाजारीकरण के लिए कोलकाता बंदरगाह पर ही निर्भर रहने के कारण उत्तराखण्ड की चाय अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अभी पूरी तरह अपनी जगह नहीं बना पायी। जिसका एक बड़ा कारण उत्तराखण्ड में चाय के किसानों को चाय की खेती के प्रति पर्याप्त प्रोत्साहन की कमी माना जा सकता है। शायद यही कारण है कि कभी उत्तराखण्ड की रौनक माने जाने वाले चाय के 63 बागानों में से अब मात्र गिनती के बागान ही रह गये हैं और वह भी भारी कीमत की आर्थोडाक चाय तक सिमट जाना चिंता का विषय है।

हालांकि आज भी कुमाऊं क्षेत्र के रानीखेत, भीमताल, दूनागिरी, कौशानी, भवाली व बेरीनाग के जंगलों में चाय के पौधे खरपतवार के रूप में खड़े देखे जा सकते है। इसलिए यदि चाय की आधुनिक खेती के लिए उत्तराखण्ड के चाय किसानों को पुनः प्रोत्साहित किया जाये और उन्हें यह विश्वास दिलाया जाये कि चाय लाभकारी फसल है तो किसानों का रूख चाय की ओर हो सकता है। जो किसानों की जिंदगी बदल सकती है। वही अब चाय को राष्ट्रीय पेय घोषित करने से चाय के प्रति जन रूझान बढ़ेगा। इससे उत्तराखण्ड तो चाय उत्पादन में बढ़ोतरी कर ही सकता है, साथ ही आसाम की चाय का उत्पादन भी बढ़ सकता है। जो मणिराम दीवान के प्रति सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी।

–पो. बाक्स 81, रुड़की-247667

स्वामी हरिदास के चमत्कार

■ स्वस्तिक राय

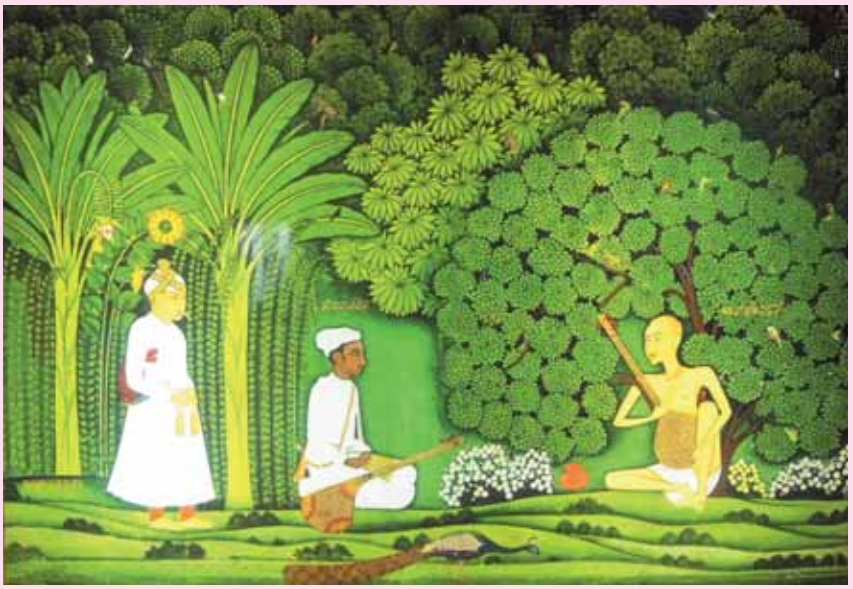

जनश्रुति है कि तानसेन तथा बैजू बावरा के गुरु वृंदावन के स्वामी हरिदासजी थे, जिनके द्वारा स्थापित ठाकुर बांके बिहारी का मंदिर विश्वविख्यात है। स्वामीजी उन दिनों निधिवन नामक स्थान में एक कुंज में साधना किया करते थे। एक दिन बादशाह अकबर ने तानसेन के गायन पर रीझकर कह दिया, ''तानसेन जैसा गायक दूसरा कोई नहीं है।''

यह सुनकर तानसेन ने अपने कान पकड़ लिए और कहा, ''खुदा के लिए ऐसा मत कहिए। मेरे गुरु स्वामी हरिदास अभी जीवित हैं। वे संगीत के महासागर हैं। मेरी औकात उनके सामने बूंद के बराबर भी नहीं है।''

यह सुनकर अकबर को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा, ''तो फिर उन्हें एक दिन दरबार में आने की दावत दो। हम उनका संगीत सुनेंगे।''

इस पर तानसेन ने उन्हें समझाया, ''वह न तो वृंदावन छोड़कर कहीं जाते हैं और न ही किसी राजा या बादशाह के सामने गाते हैं।'' बादशाह अकबर यह सुनकर दंग रह गए। वे बोले, ''तो ठीक है, हम वहीं उनकी कुटिया पर जाकर उनका दीदार करेंगे और संगीत भी सुनेंगे।''

यह सुनकर तानसेन ने दुबारा कहा, ''सरकार, बादशाही तामझाम के साथ वहां जाना मुश्किल है। क्योंकि वे तो जंगल में रहते हैं और फकीर हैं। यह भी संभव है कि आपके कहने पर भी वे गाने के लिए राजी न हों। सिर्फ एक तरीका हो सकता है। आप मेरे खवास के रूप में मेरा तानपुरा लेकर चलें तो शायद बात बन जाए।''

अकबर राजी हो गए।

निधिवन के निकुंज द्वार पर बादशाह को खड़ा करके तानसेन ने स्वामी हरिदास को प्रणाम किया। तब तक स्वामीजी तानसेन की सारी लीला समझ गए थे। उन्होंने बादशाह को अंदर आने की अनुमति दे दी। स्वामीजी ने तन्मय होकर ध्रुपद की एक तान छेड़ दी। सुनकर बादशाह अकबर गद्‌गद् हो गए। लगा जैसे किसी दिव्य लोक में हैं। संगीत समाप्त होने पर अकबर ने कहा, ''स्वामीजी, कुछ सेवा बताइए।''

स्वामीजी हंसकर बोले, ''सेवा करोगे।''

अकबर ने स्वीकृति में 'हां' कहा।

स्वामीजी ने अपने एक शिष्य को बुलाकर कहा, ''इन्हें विहार घाट की वह सीढ़ी दिखा दो जिसका एक कोना टूट गया है ताकि ये उसकी मरम्मत करवा दें।''

अकबर विहार घाट पहुंचे तो चकित रह गए। सारा घाट ही विविध हीरे-जवाहरात, मणि-माणिक्यों से जगमगा रहा था। जो टूटी सीढ़ी थी उसमें ऐसे रत्न जड़े हुए थे जो अकबर के खजाने में नहीं थे।

अकबर यह सारा खेल समझ गए और लौटकर स्वामी हरिदास के चरणों में गिरकर माफी मांगी।

एक दिन एक भक्त बांके बिहारीजी की सेवा के लिए कीमती इत्र लाया। स्वामी हरिदास ने भक्त का लाया इत्र यमुना में उड़ेल दिया। भक्त चकित रह गया, लेकिन वह समझ नहीं पाया कि सुगंध कहां गई। स्वामी हरिदास ने उससे कहा, ''जाओ बांके बिहारी के दर्शन कर आओ। तुम बड़े भाग्यशाली हो, क्योंकि ठाकुरजी ने तुम्हारी भेंट स्वीकार कर ली है।'' वह भक्त मंदिर में गया तो वहां अपने लाए इत्र की महक मंदिर में महसूस कर दंग रह गया।

एक दिन एक भक्त पारसमणि लेकर स्वामी हरिदास के पास आया और बोला, ''यह पारसमणि आप रख लें, इससे बांके बिहारी की निरंतर सेवा चलेगी और मुझे अपना शिष्य बना लें।''

स्वामीजी ने कहा, ''शिष्य तो बना लेंगे, लेकिन पहले इस पत्थर को यमुना में फेंककर आओ।'' भक्त उलझन में फंस गया। वह उसे यमुना के किनारे डाल आया।

बेचैन मन से लौटा तो स्वामीजी ने हंसकर कहा, ''बहुत पछतावा है उस पत्थर का तो जाकर वापस ले आओ।''

भक्त जब किनारे पहुंचा तो दंग रह गया। वहां किनारे पर तो हजारों पारसमणियां बिखड़ी पड़ी थीं। उस भक्त की सारी आसक्ति दूर हो गई।

स्वामी हरिदास ने जिस बांके बिहारी का प्राकट्य अगहन माह की शुक्ल पक्ष की पंचमी को किया था। प्रारंभ में उनका मंदिर निधिवन में ही था। निधिवन नामक स्थान वृंदावन में आज भी है जहां स्वामी हरिदासजी की समाधि बनी हुई है। उन्होंने अनेक पदों की रचना की तथा स्वामी हरिदास की रसोपासना विधि की व्याख्या की। स्वयं स्वामी हरिदास ने अनेक पदों की रचना की तथा संगीत के अनेक रागों की रचना की। स्वामी हरिदास को ही ध्रुपद का आविष्कारक माना जाता है।

वर्तमान में गोस्वामी आचार्य मृदुल कृष्ण शास्त्री महाराज उन्हीं के वंशज हैं। शास्त्रीजी ने भागवत प्रवक्ता के रूप में विश्व ख्याति अर्जित की है। उनके गाए भजन ''राधे राधे जपे चले आयेंगे बिहारी, छोटी-छोटी गैया, छोटे-छोटे ग्वाल, छोटे से मेरो मदन गोपाल'' आदि काफी लोकप्रिय भजन हैं।

स्वामी हरिदास के अन्य वंशज भी भक्ति तथा संगीत के मार्ग पर अपने मुकाम बना रहे हैं। ●

जीवन का अंतिम लक्ष्य सुख की प्राप्ति है

■ दलाई लामा

अक्सर लोग मुझसे यह सवाल करते हैं कि हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है? मैंने भी कई बार इस सवाल के जवाब तलाशे हैं। हम सभी को इसका जवाब जरूर ढूंढना चाहिए। क्योंकि तभी हमारे जीवन का कोई महत्व है। मेरा मानना है कि जीवन का लक्ष्य है- सुखी रहना।

इस दुनिया में कदम रखने के साथ ही हम सुख की तलाश करने लगते हैं। भले ही हमारी सामाजिक स्थिति कैसी भी क्यों न हो, हमारी सोच दूसरों से अलग हो या नहीं। हम पढ़े-लिखें हों या नहीं- खुश रहने की हमारी इच्छा कभी दम नहीं तोड़ती। इस पृथ्वी पर रहने वाला प्रत्येक मनुष्य अपने लिए खुशहाल जिंदगी चाहता है। इसिलए हमें यह जानने की कोशिश जरूर करनी चाहिए कि हम सुखी कैसे रह सकते हैं।

सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि सुख के क्या मायने हैं। सुख दो तरह के होते हैं- शारीरिक सुख और मानसिक सुख। इसी तरह दुख भी शारीरिक और मानसिक दो तरह के होते हैं। इन दोनों का हमारी जिंदगी पर सबसे ज्यादा असर होता है। पर ज्यादा असर होता है मानसिक सुख या दुख का। शारीरिक सुख या दुख उसके बाद आता है। अगर हम बहुत ज्यादा बीमार हैं या हमारी बुनियादी जरूरतें पूरी नहीं होतीं, तभी हम शारीरिक दुख का अहसास करते हैं। अन्यथा मानसिक दुख से ही हम ज्यादा प्रभावित होते हैं। इसीलिए हमें शारीरिक से ज्यादा मानसिक सुख या खुशी की जरूरत होती है। इसके लिए हमें मानसिक सुख हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए।

मैंने अनुभव किया है कि आंतरिक संतोष-सहानुभूति और करुणा से प्राप्त होता है। हम दूसरों की जितनी मदद करेंगे, उतनी ही अधिक खुशी महसूस करेंगे। हमारे मन में दूसरों के लिए अच्छी भावनाएं आयेंगी तो हमारा मन शांत होगा। भीतर का भय और असुरक्षा बोध कम होगा। भीतरी ताकत बढ़ेगी। यही सफलता का मूलमंत्र है। आज के दौर में हम सबके जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएं हैं। हम नाउम्मीद और हतोत्साहित हो चुके हैं। कठिनाइयों का सामना करने से घबराते हैं। पर सिर्फ हमीं ऐसा महसूस नहीं करते। ऐसा महसूस करने वाले दूसरे भी हैं। दूसरों की जिंदगी भी कठिनाइयों और दुखों से भरी हुई है।

इसीलिए हमें दूसरों की तकलीफों को दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। इससे हमारा मन शांत होगा, हमें कठिनाइयों से लड़ने की हिम्मत भी मिलेगी। बहुत से लोग कहते हैं कि आज के दौर में मानवता हार गई है।

अपने भीतर प्रेम और करुणा को जगाने के लिए क्रोध और नफरत की भावना को किनारे रखना होगा। क्रोध और नफरत ऐसी भावनाएं हैं जिनसे पीछा छुड़ाना आसान नहीं।

प्रेम और करुणा के कोई मायने नहीं हैं, क्योंकि हिंसा और नफरत की भावना चारों तरफ फैली हुई है। मैं ऐसा नहीं मानता। हम मनुष्यों ने पृथ्वी पर सैकड़ों-हजारों साल पहले जन्म लिया था। अगर मनुष्यों का मस्तिष्क केवल क्रोध से नियंत्रित होता, तो हम इतने सालों तक इस पृथ्वी पर कायम ही नहीं रहते, पहले ही नष्ट हो गए होते। लेकिन अनेक युद्धों के बावजूद मानव आबादी लगातार बढ़ रही है। इसका यही अर्थ है कि दुनिया में प्रेम और करुणा का ही राज है।

अपने भीतर प्रेम और करुणा को जगाने के लिए क्रोध और नफरत की भावना को किनारे रखना होगा। क्रोध और नफरत ऐसी भावनाएं हैं जिनसे पीछा छुड़ाना आसान नहीं। पर इन्हें नियंत्रित तो किया जा सकता है। क्रोध से हमारे मस्तिष्क की तर्क शक्ति सबसे पहले प्रभावित होती है।

क्रोध से हममें ऊर्जा का संचार तो होता है लेकिन वह ऊर्जा बेकाबू होती है। यह विनाश कर सकती है। अगर हमें क्रोध से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा का सदुपयोग करना है तो अपने भीतर करुणा का भाव जगाना होगा।

यही क्रोध का एंटीडॉट है। कई बार लोग करुणा को किसी व्यक्ति की कमजोरी समझ लेते हैं। लेकिन यही हमारी भीतरी ताकत का प्रतीक है। ●

मंत्र कब, कहां और कैसे?

■ ओमप्रकाश शर्मा

मंत्र-ग्रहण में प्रथम सोपान गुरु होता है जो मंत्र के विषय में साधना की समस्त जटिल क्रियाओं से अवगत कराता है। मंत्र दीक्षा द्वारा उसे साधना में आगे बढ़ना चाहिए। किस देवता या देवी का मंत्र हो, उस मंत्र की अनुकूलता-प्रतिकूलता साधक के हित में है या अहित में है, एक साधक के लिए यह जानना आवश्यक है। एक मंत्र-साधक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना होगा- मंत्र कब, कहां और कैसे आरंभ करें। मंत्रों के आरंभ करने के लिए मास, पक्ष, तिथियां, विशेष सिद्धयोग, गुरु पुष्य, रवि पुष्य, ग्रहण काल, मंवादि विधियां, होली एवं दीवाली जैसे पर्व, महाविद्याओं की जयंती आदि सभी का निर्णय करें।

मंत्रों की साधना कहां की जाए? इसके लिए तुलसीवन, बिल्ववन, पर्वत, पवित्र नदी तट, सरोवर या समुद्र तट, जल के मध्य, तीर्थ प्रदेश, गोशाला, देवालय, श्मशान एवं गुरु गृह आदि प्रशस्त हैं। अब साधना कैसे की जाए, इसके लिए एक विस्तृत नियमावली है या मार्गदर्शन है जैसे आसन- किस वस्तु का हो जैसे कुशासन, कम्बलासन, मृगचर्म, शवासन, योगासन एवं वृक्षासन। आसनों का रंग कैसा हो? दिशा-मंत्र जप की दिशा का निर्णय मंत्र के अनुसार किया जाता है। अभिचार कर्म, पुष्टि शांति एवं वश्य कर्मों के अनुसार दिशा निश्चित की जाती है। मंत्र जप के लिए माला ग्रहण करनी होती है। माला देव और मंत्र भेदों के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। जैसे शिव और दुर्गा मंत्रों के जप हेतु रुद्राक्ष, हनुमत जप हेतु रक्त चंदन और मूंगा, विष्णु मंत्रों के लिए तुलसी एवं चंदन माला, लक्ष्मी मंत्रों हेतु कमलगट्टा माला आदि। स्फटिक माला अधिकांश मंत्र जपों में प्रशस्त है। कार्यभेद से माला भेद हो जाता है। मंत्र जप के पूर्व 'माला संस्कार' कर लेना चाहिए। माला को गोमुखी में रखकर जपें। जप भेद के अनुसार अंगुलि भेद होता है। शांति और पुष्टि कार्यों में अंगुष्ठ और मध्यमा द्वारा जपते हैं। प्रत्येक अंगुलि के संयोग से पृथक कार्यभेद से अंगुलि भेद हो जाता है।

मंत्र साधना से पूर्व मंत्र का संस्कार अवश्य करना चाहिए। ये दस हैं। इसके बाद मंत्र-चैतन्य की क्रिया की जाती है। मंत्र का पुरश्चरण करना एक प्रकार से तपस्या काल है। मंत्र की जितनी जपसंख्या निर्दिष्ट होती है उतने ही मंत्रों का जप एक निश्चित अवधि में एक क्रम से विधिपूर्वक संपन्न की जाती है। पुरश्चरण के पांचों अंगों का निर्वहन किया जाता है जिसमें (1) जप, (2) होम, (3) तर्पण, (4) अभिषेक एवं (5) ब्राह्मण भोजन। देवता या देवी का पूजन अपनी

सामर्थ्यानुसार संपन्न करे। इसके लिए पंचोपचार, दशोपचार एवं षोड्शोपचार पूजा की जाती है। इसके लिए देह शुद्धि के बाद भूमि शुद्धि करें। कर्मचक्र के अनुसार आसन बिछाकर अपनी दाहिनी ओर पूजा सामग्री रखकर शुद्ध घृत का दीपक जलाकर सम्मुख रखें। उसके उपरांत गुरु, गणेश और इष्टदेव को प्रणाम कर पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि से पूजन करें। जिस मंत्र का उपदेश हुआ है उसका विनियोग, ऋषि न्यास, कर न्यास, षडङ्गन्यास देवता का ध्यान तथा उसका निर्दिष्ट संख्या में जप प्रारंभ करें। हमारे ऋषि-मुनियों ने एक दिन (24 घंटे) का विभाजन विभिन्न ऋतुओं में क्रमानुसार किया है। कर्म भेद से उसकी अधिष्ठात्री देवियां भी हैं। विभिन्न मुद्राएं, कुंड होम, समिधा, तिथि, दिशा, माला, ब्राह्मणभोज एवं विभिन्न तर्पण द्रव्य निर्दिष्ट हैं। एक उदाहरण के तौर पर जैसे- शांति कर्म की देवि 'रति', पुष्परंग-'श्वेत', ऋतु-बसंत (सूर्योदय से 10 घटी तक), दिशा-ईशान, तिथि-शुक्ल पक्ष को 2, 3, 5 एवं सप्तमी, दिन-बुधवार एवं गुरुवार, आसन-पद्मासन, होम मुद्रा-मृगी, समिधा-गाय का घी मिली दूर्वा, माला-शंख, जाति-नमः ब्राह्मणभोज-होम के दशांश तुल्य, कुंड-वृत्ताकार, लेखनी-स्वर्ण आदि। इसी प्रकार अन्य पांच कर्मों में यथा वश्य, स्तंभन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण में भी देव पुष्प, ऋतु आदि की व्यवस्था दी है।

माला जप पूर्ण हो जाने पर जप को देवता के दक्षिण हस्त एवं देवी के वामहस्त में अर्पित कर दें। इसके बाद माला को मस्तक एवं चक्षुओं पर स्पर्श कराएं। मंत्र जप के लिए माला ग्रहण करनी होती है। ज्ञातव्य बिन्दु निम्नलिखित हैं-

- एक ही माला पर सभी मंत्रों का जप न करें।
- माला 108 मणियों (दानों) की शुभ होती है।
- माला जपते समय सुमेरु का उल्लंघन न करें।
- मंत्र जपते समय ऊंघना, सोना, बात करना, मल-मूत्र के वेग को रोकना वर्जित है।
- मंत्र जप में मंत्रार्थ और मंत्र के देवता का ध्यान करें। तप को देवता को अर्पण कर दें।
- जपस्थान कोलाहल रहित, सुरम्य और शांत हो। दिनचर्या एक समान रखें और निश्चित समय तथा निश्चित स्थान पर ही जप करें।
- भक्ष्याभक्ष्य का ध्यान रखें तथा हविष्यांत का ही सेवन करें।
- पूजाकाल में सम्मुख घृत का दीप और दाहिनी ओर जल-पात्र रखें।
- किसी के अनिष्ट की कामना न करते हुए जप करें- मारणादि अभिचार क्रिया अंत में स्वयं के लिए हानिकर होती है।
- मंत्रों का उच्चारण शुद्ध हो तथा जप की गति समान रखें।
- जहां तक संभव हो जप मानसिक ही करें, वाचिक एवं उपांशु जप से बचें।
- जप पश्चात देव या देवी से त्रुटियों के लिए क्षमायाचना कर लें।
- जप काल पर्यंत मन, वचन, कर्म से शुद्ध बने रहें और सात्विक आचरण ही करें।

-प्राच्य विद्या-शोध केन्द्र
4/32, आवास विकास कॉलोनी,
हाथरस (उप्र)

खुजराहो की मूर्तियों में जीवंत कलाएं

■ डॉ. (सुश्री) शरद सिंह

खुजराहो की मंदिर-भित्तियों पर मूर्तिकाल के अप्रतिम सौन्दर्य के साथ विभिन्न कलाओं की सुंदर प्रस्तुति है। इनसे चंदेलकालीन कला, जनजीवन, रहन-सहन आदि के बारे में जानकारी मिलती है। खुजराहो की मूर्तियों में जिन ललित कलाओं को आकार प्रदान किया गया उनमें गायन, वादन, नृत्य, गोष्ठी तथा कला-विमर्श से संबंधित दृश्य सम्मिलित हैं जिनके द्वारा चंदेलकालीन समाज, संस्कृति, रहन-सहन तथा कला-प्रवृत्तियों आदि का ज्ञान होता है। ये विविध कलाएं हैं-

नृत्य : नृत्य मानव की आदिम अवस्था से ही उल्लास की अभिव्यक्ति का माध्यम रहा है, किन्तु सभ्यता के विकास के साथ-साथ इस अनियंत्रित उद्वेग को कला की सीमाओं में बांधकर उसे विशिष्ट स्तर प्रदान किया गया। भारत में नृत्य को प्राचीनकाल से ही कला का पद प्राप्त है। भरत मुनि के 'नाट्यशास्त्र' में नृत्य का विशद विवेचन मिलता है। इसके भी पूर्व ऋग्वेद में नृत्य का उल्लेख अनेक स्थानों पर हुआ है। ऋग्वैदिककाल में 'समन' नामक मेले में तरुण और तरुणियां दोनों मिलकर नृत्य करते थे। गंधर्वों और अप्सराओं की वृत्ति नृत्य-गान ही थी। मंदिर-वास्तु के अलंकरणों में खुजराहो के मंदिर भित्ति-नृत्य की विविध भाव-भंगिमाओं से परिपूर्ण हैं।

खुजराहो मूर्तिशिल्प में नृत्य मुद्राओं, नर्त्तकियों एवं गंधर्वों को बड़ी कलात्मकता के साथ उतारा गया है। कुछ नर्त्तकियों को इतनी कठिन मुद्रा में दिखाया गया है कि उनकी नृत्य-मुद्राएं असंभव-सी जान पड़ती है। लक्ष्मण-मंदिर के सामने बायीं ओर स्थित लघु मंदिर में एक नर्त्तकी को दर्शकों की ओर पीठ किये हुए नृत्य मुद्रा में दिखाया गया है। इस नर्त्तकी ने अपनी कमर को इस तरह मोड़ रखा है कि उसके मुख तथा वक्ष दर्शकों की ओर हैं। प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसकी अधोदेह पर देह का ऊपरी भाग अलग से घुमा कर जोड़ दिया गया हो।

इसी प्रकार की मुद्रा विश्वनाथ-मंदिर की बायीं आंतरिक प्रदक्षिणा भित्ति पर तथा कंदरिया महादेव-मंदिर की बायीं एव दाहिनी बहिर्भित्ति पर है जिसमें नर्त्तकी ने अपनी देह के ऊपरी हिस्से को कमर से मोड़ कर दर्शकों की ओर कर रखा है। लक्ष्मण-मंदिर तथा कंदरिया महादेव-मंदिर में एक अन्य नृत्यमुद्रा प्रदर्शित है जिसे 'त्रिभंग' कहते हैं। इसमें नर्त्तकी के दोनों हाथों की उंगलियां उसकी देह के पृष्ठ भाग में जाकर आपस में गुंथी हुई हैं। एक अन्य मुद्रा में नर्त्तकी ने अपने दायें पैर को मोड़ कर दायें हाथ से पकड़ रखा है तथा उसका चेहरा बायें कंधे की ओर झुका हुआ है। नर्त्तकियां प्रायः अधोवस्त्र के रूप में चूड़ीदार पाजामा जैसा कसा हुआ वस्त्र पहनती थी। यद्यपि उनका अनावृत वक्षस्थल आभूषणों से सुसज्जित रहता था।

खुजराहो में नटराज की मात्र दो प्रतिमाएं हैं- दूलादेव-मंदिर-भित्ति पर नटराज के तीन हाथों में क्रमशः त्रिशूल, डमरू और खप्पर प्रदर्शित हैं तथा चौथा हाथ कटि पर स्थित है एवं दूसरी प्रतिमा संग्रहालय में स्थित है जिसमें वरद्, त्रिशूल, खड्ग, डमरू, खेटक, खटवांग खप्पर आदि प्रदर्शित हैं। नृत्य और संगीत दोनों के मध्य मधुर तत्व है गायन। गायन को संगीत मात्र संगीत प्रदान करता है, जबकि संगीत को गायन के माध्यम से अर्थवत्ता प्राप्त होती है। गायन को विशिष्ट एवं स्वतंत्र कला माना गया है। इसीलिए खुजराहो के मूर्तिशिल्प में गायन को उत्खचन का विषय बनाया गया है।

प्राक् ऐतिहासिक काल में अर्थहीन स्वराभिव्यक्ति गायन की परिचायक थी। किन्तु सभ्यता के विकास के साथ-साथ साहित्यिकता का विकास हुआ और गायन कला का साहित्य लेखबद्ध किया जाने लगा। गायन में श्रवण का आधार होने पर भी उसमें समाहित साहित्यिक तत्व उसकी भावाभिव्यक्ति को स्थायित्व प्रदान करते हैं।

वेदों में गंधर्वों को गायन कला में निपुण बताया गया है। खुजराहो में गंधर्वों की अनेक मूर्तियां हैं। गंधर्वों के अतिरिक्त यक्षों का भी अंकन है। विष्णुपुराण में गंधर्वों की उत्पत्ति के संबंध में बताया गया है कि ब्रह्मा के गाते समय उनके शरीर से गंधर्व उत्पन्न हुए। वाणी का उच्चारण करते हुए उत्पन्न होने के कारण वे गंधर्व कहलाए– गयतोंगात्समुत्पन्ना गंधर्वास्तस्य तत्क्षणात्। पिबन्तोजज्ञिये वाचं गंधर्वास्तेन तेद्विज।

जावरी-मंदिर की भित्तियों पर दो आदमियों को नृत्य करते हुए तथा एक आदमी को कान पर हाथ रखे, मुंह खोले हुए अर्थात् आलाप देकर उच्च स्वर में गाते हुए प्रदर्शित किया गया है।

खुजराहों में स्थापत्य एवं शिल्प-कला में सौंदर्य के साथ-साथ ललित कलाओं का भी अद्वितीय प्रदर्शन है जो शिल्पकारों के अन्य कलाओं के बारे में विस्तृत ज्ञान एवं कलानुभव को दर्शाता है।

-एम-111, शांति विहार, रजाखेड़ी
सागर-470004 (म.प्र.)

अन्तर्द्रष्टा बनें

■ आचार्य चंदन मुनि

आचार्य कहते हैं कि हे देव! जिसने आपका दर्शन पा लिया, उस आदमी की आंखों को अन्य कोई दृश्य सुहाता नहीं है। अर्थात् जिसने आपको देख लिया, उसके लिए फिर दूसरा कोई आकर्षण नहीं रह जाता। जिसने चन्द्रमा के समान उज्ज्वल क्षीरसागर का मधुर जल पी लिया हो वह सामान्य समुद्र का खारा पानी क्यों पियेगा? जब तक सही वस्तु का स्वाद नहीं आता, तभी तक मनुष्य अन्य चीजों के पीछे-पीछे फिरता है। सच्ची वस्तु, सच्ची स्थिति जब प्राप्त हो जाये तो फिर उन भंगुर वस्तुओं का आकर्षण सहज ही नष्ट हो जाता है।

छबि अन्दर की जिसने देखी,
वह फिर बाहर को क्या देखे?
अक्षय पर आंखें हों जिसकी,
वह क्षण-भंगुर को क्या देखे?
छवि अच्छी लगती बाहर की,
जब तक अन्दर की नहीं देखी।
पर की अच्छी लगती तब तक,
जब तक निज घर की नहीं देखी।।
जिसने चिन्मय घर को देखा,
वह पत्थर घर को क्या देखे?
छवि अन्दर की....।।

आनन्दघन नामक एक भहान जैनयोगी हुए हैं। वे जंगलों में रहा करते थे। उन्होंने बड़े निर्वेदमय आध्यात्मिक पद लिखे हैं। एक बार आनन्दघन महाराज किसी पहाड़ी गुफा में ध्यान कर रहे थे। भक्त लोग उनके दर्शन करने के लिए आये। जब यह ध्यान करने के पश्चात बाहर आये तो लोगों ने उनसे कहा कि महाराज! आप वहां अंदर बैठते हैं। देखिए, यहां बाहर का दृश्य कितना सुहावना है, कितना सुंदर है। यह सुनते ही आनन्दघनजी ने कहा—अरे! बाहर का नहीं, भीतर का दृश्य कितना सुहावना है? वह दृश्य वास्तव में बेहद सुंदर है। जिसने भीतर की आभा को देख लिया, उसके लिए बाहर क्या देखना? जिस व्यक्ति की आंखें ऐसी वस्तु पर स्थिर हों, जो अविनश्वर है, कभी नाश नहीं होतीं तो फिर वह नाशवान् वस्तुओं की ओर क्यों देखेगा? संसार की जो वस्तुएं हैं, वे नाशवान् हैं। जो भी दृश्य हम देखते हैं, वे परिवर्तित होने वाले हैं। प्रात: जो फूल खिलता है, वह शाम को मुरझा जाता है। इसलिए नाश होने वाली वस्तुओं को क्या देखना? जो शाश्वत है, जो ध्रुव है, उस पर जिसका ध्यान होगा, उसकी दृष्टि फिर नाशवान वस्तुओं की ओर नहीं जायेगी। इसलिए हमें बाहर की वस्तुएं तब तक ही अच्छी लगेंगी, जब तक हम अन्दर की चीजों को नहीं देख लेते। जब तक हम घर की वस्तु को नहीं देख लेते, तब तक ही हर चीज अच्छी लगती है।

जिस समय गांधीजी विलायत में गये, उस समय वे बैरिस्टरी के छात्र के रूप में थे। विलायत में उनका संपर्क ईसाइयों से हुआ। यहां तक कि वे ईसाई बनने के लिए तत्पर हो गये, पर ईसाई बनने से पहले उन्होंने श्री राजचन्द्र भाई को एक पत्र लिखा, जिनके प्रति उन्हें बड़ी श्रद्धा थी। उन्होंने लिखा कि मैं ईसाई धर्म अपनाना चाहता हूं, आपकी क्या राय है? श्री राजचन्द्र भाई को जब पत्र मिला तो उन्होंने जवाब दिया कि कोई बात नहीं, आप जो चाहें बन सकते हैं, क्योंकि धर्म किसी के लिए बंधन नहीं है। धर्म तो अपनी आत्मा की चीज है। जो अच्छा लगे, उसे अपनाएं। लेकिन मेरा कहना इतना ही है कि जिस धर्म में आप पैदा हुए हैं, कम से कम उसका अध्ययन तो करें। यदि उसमें आपको संतोष न हो तो दूसरा धर्म अपना लें। गांधीजी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि उनके कहने से मैंने अपने ग्रंथों को देखना प्रारंभ किया। जब मैंने गीता पढ़ी तो पाया कि सब कुछ इसमें विद्यमान है। जिन बातों के कारण मैं औरों के धर्मों से प्रभावित हुआ था, उन सबकी शिक्षा इसमें मिलती है। घर की चीजों को हम नहीं देखते, बाहर की चीजों को ही देखते हैं, यही हमारी सबसे बड़ी भूल है। हर आदमी को अपनी चीजों को गहराई से देखना चाहिए।

हमारी कितनी बड़ी भूल है कि हमने अपने अंदर की वस्तु को नहीं देखा है। बाहर की वस्तुओं से हम कब तक अपना काम चला सकते हैं?

जिस बगीचे में कमल के सुगंधित फूल खिले हों तो वहां भौंरे सहज रूप से आयेंगे ही। ज्ञानी वही होता है जो कारणों की ओर ध्यान देता है। यदि हमने बगीचे में बीज बोया है तो पौधा अवश्य ही होगा तथा उसमें फल भी अवश्य ही लगेंगे। अगर हमारी वृत्तियां शुद्ध हैं, जीवन शुद्ध है, आत्मा शुद्ध है तो उसका परिणाम निश्चित ही शुद्ध होगा। उसका परिणाम कभी भी बुरा नहीं हो सकता, यदि हमने अच्छा काम किया हो। यही तो अन्तर्दर्शन का फल है।

''धर्मस्य फलमिच्छन्ति, धर्मं नेच्छन्ति मानवा:।''

लोग चाहते हैं कि हमें धर्म का फल मिले, किन्तु धर्म को नहीं चाहते। धर्म के फल की कामना करते हैं। यह कैसे संभव होगा। आप फल तो चाहते हैं धर्म का और करते हैं पाप। पाप का फल दु:ख ही मिलता है। अगर आप धर्म का फल चाहते हैं तो आपको धर्म का आचरण करना ही होगा। अत: स्तुतिकार कहता है कि भगवन्! जिसने आपका दर्शन पा लिया, उसकी दृष्टि फिर और कहीं पर नहीं जा सकती।

-प्रस्तुति: राजेश बंसल, जयपुर

लोग चाहते हैं कि हमें धर्म का फल मिले, किन्तु धर्म को नहीं चाहते। धर्म के फल की कामना करते हैं। यह कैसे संभव होगा। आप फल तो चाहते हैं धर्म का और करते हैं पाप। पाप का फल दु:ख ही मिलता है। अगर आप धर्म का फल चाहते हैं तो आपको धर्म का आचरण करना ही होगा।

अपनी सांस्कृतिक धरोहर को बचाना है

■ विजेन्द्र गोयल

अंग्रेजी राज के भारत में 1835 ई. में कलकत्ता के बन्दरगाह में एक जहाज विलायती माल लेकर आया। वह जहाज नाना प्रकार की लोभनीय और आकर्षक वस्तुओं से पूर्ण था। इसमें औषध से लेकर सुईं तक बहुत सारी व्यवहारयोग्य वस्तुएं बिक्री के लिए भारत भेजी गई थीं। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि एक पैसे की भी कोई वस्तु यहां नहीं बिक सकी। उस समय की भारतीय जनता समझती थी कि म्लेच्छ देश की तैयार की हुई वस्तुएं हिन्दुओं के लिए अस्पृश्य हैं, अव्यवहार्य हैं। यह संस्कार इतना दृढ़ और प्रबल था कि बहुत प्रयत्न करने पर भी विलायती माल भारत में न चल सका और उस जहाज को जैसा आया था, वैसे ही वापस लौट जाना पड़ा।

उस समय सेक्रेटरी ऑफ स्टेट (भारत मंत्री) लॉर्ड मैकाले ने इस बात को देखकर प्रतिज्ञा की थी कि भारत में हम अब एक ऐसी जाति पैदा करेंगे, जिसका रंग और रक्त भारतीय रहेगा परन्तु शिक्षा, दीक्षा और रुचि में वह अंग्रज हो जायेगी।

लॉर्ड मैकाले ने भारत के संदर्भ में कहा था–''मैंने संपूर्ण भारत का भ्रमण किया। यहां मैंने अथाह धन-संपदा-वैभव, सुख-समृद्धि और पूर्ण संतुष्टि देखी है। अपने भ्रमण में मैंने कोई भिखारी नहीं देखा। यहां निर्धन से निर्धन व्यक्ति भी कुछ ना कुछ देने की सामर्थ्य रखता है। ऐसे उच्च विचार व नैतिक मूल्यों वाला देश शायद ही इस पृथ्वी पर दूसरा हो। मुझे नहीं लगता कि इस देश को हम कभी अपना गुलाम बना सकते हैं, परन्तु यह तभी संभव है जबकि हम यहां के नैतिक मूल्यों व शिक्षा पद्धति पर कुठाराघात करें। यहां की शिक्षा पद्धति में परिवर्तन किए बिना यह कार्य संभव नहीं है। यदि हम भारत में ब्रिटिश शिक्षा पद्धति लागू करने में सफल हो गए तो भारत की आगामी पीढ़ी वैसी ही बनेगी जैसा हम चाहते हैं- एक पूर्णतया गुलाम। जो दिखने में तो भारतीय होगी परन्तु अन्दर से ब्रिटिश।''

आज विश्व की सभी जातियां, सम्प्रदाय और धर्म अपनी सांस्कृतिक धरोहरों, प्रतीकों को खोज-खोजकर उन्हें पुन: स्थापित कर और आगे बढ़ाने में जुटी हैं। विडम्बना है कि संस्कृति के पुरोधा कहे जाने वाले हम भारतवासी अपने संस्कारों के प्रति उपेक्षित भाव रखते हुए पाश्चयत्य संस्कृति के कृत्रिम प्रकाश की ओर भागने का प्रयास कर अपने आपको गौरवान्वित समझ रहे हैं। जिन संस्कारों, धरोहरों व प्रतीकों की नींव पर हमारी संस्कृति खड़ी हुई है, हम आज विदेशी षड्यंत्रों के तहत उन्हीं को नष्ट करने पर तुले हुए हैं। लॉर्ड मैकाले की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए हम हर स्तर पर गिरकर अपने सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना कर नष्ट कर रहे हैं।

हिन्दू धर्म और संस्कृति- पवित्र संस्कारों से मार्जित आचार-व्यवहार और सद्व्रत पर टिकी है। भारत केवल एक देश ही नहीं बल्कि समग्र विश्व के लिए एक संदेश है। यही कारण है कि प्राचीन काल में भारत धर्म में 'जगद्गुरु', राजनीति में 'चक्रवर्ती' और सम्पदा में 'सोने की चिड़िया' कहलाता था। आज भले ही हमारा देश चक्रवर्ती या सोने की चिड़िया ना रहा हो, लेकिन धर्म के क्षेत्र में हमें कोई भी देश चुनौती नहीं दे सकता। अत: वक्त की पुकार है कि हमें अपने धर्म पर अडिग रहकर अपनी आध्यात्मिकता को बनाए रखना है, अन्यथा हम कहीं के भी नहीं रहेंगे, क्योंकि राजनीति और सम्पदा में हम पिछड़ चुके हैं। केवल अपने सनातन नियमों से ही हमारे विश्व में एक अलग पहचान बनी हुई है। ●

एक कला है उचित रखरखाव

■ सीताराम गुप्ता

बेकार चीजों की तरह बेकार के काम तथा निरर्थक संबंध भी हमारे कीमती समय को नष्ट करते हैं तथा हमारी कार्य कुशलता को बाधित करते हैं और इन सब का प्रभाव पड़ता है हमारे व्यक्तित्व पर।

भवन निर्माण कला में वास्तुशास्त्र का विशिष्ट महत्त्व है। वास्तुशास्त्र के अनुसार भवन की स्थिति ऐसी होनी चाहिए जिससे हवा और धूप पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सके तथा मौसम के अनुसार सर्दी, गरमी और बरसात से भी बचाव हो सके ताकि हम अपने स्वास्थ्य को ठीक रख सकें। भवन तथा उसके विभिन्न भागों की ही उपयुक्त स्थिति होनी अनिवार्य नहीं अपितु भवन के विभिन्न भागों में भी हर चीज उचित स्थान पर ही होनी चाहिए क्योंकि इसका भी सीधा संबंध हमारे मनोभावों से है और हमारे मनोभावों का हमारे स्वास्थ्य से। निदा फ़ाज़ली साहब का एक शेर है-

अपना ग़म लेके कहीं और न जाया जाए,
घर में बिखरी हुई चीज़ों को सजाया जाए।

जी हां, बिखरी हुई चीजों को सजाना-संवारना बेहद जरूरी है क्योंकि बिखरी हुई चीजों को सजाना-संवारना एक सम्पूर्ण उपचार पद्धति है। विशेषज्ञों का कहना है कि यदि आपके कार्य करने के स्थान पर अथवा घर पर चीजें अस्त-व्यस्त या बेतरतीब पड़ी हैं तो उन्हें व्यवस्थित कीजिए, उन्हें सही तरीके से रखिए इससे आपके मन के अंदर भी कोई सही चीज हो जाएगी। वास्तव में आपके कार्य स्थल तथा घर की स्थिति का आपके मन पर गहरा असर होता है। बिखरी हुई चीजें या अव्यवस्था आपके मन द्वारा आपके व्यक्तित्व में बिखराव पैदा कर देती हैं।

जब आप बार-बार अपने आस-पास के वातावरण में अव्यवस्था तथा बिखराव देखते हैं तो अंदर ही अंदर एक संवाद चलता है, ''सब कुछ कितना बेतरतीब कितना अस्त-व्यस्त है'' ये संवाद आपके मन में अंकित हो जाता है, आपके मन की इसके लिए कंडीशनिंग हो जाती है और आपके मस्तिष्क की कोशिकाएं इसी दिशा में सक्रिय होकर आपके शरीर को प्रभावित कर आपके परिवेश के अनुसार ही आपका व्यक्तित्व बना देती हैं।

मेज पर या कभी-कभी टीवी पर भी यदि कंघी, जूते साफ करने का ब्रश, चाबियां, पेन, घड़ियां, पैसे, दवाएं, टूटे बटन, पुराने अखबार तथा उन्हीं के बीच बिजली-पानी तथा टेलिफोन के बिल, रूमाल, भुजिया का पैकेट आदि सब एक साथ पड़े हैं और उन्हीं के ऊपर पड़ा है टेलिफोन तो यह किसका परिचायक है?

पुराने अखबार, पत्रिकाएं, न पहनने योग्य पुराने कपड़े तथा जूते, बाबा आदम के जमाने का ट्यूबों वाला टूटा-फूटा रेडियो, पुराने रिकार्ड, गत्ते के डिब्बे, टूटे-फूटे बर्तन, टूटे मिट्टी के गमले, जंग आलूदा नकारा टार्च, आखिर क्यों आपने अपने मन पर बोझ बना रखे हैं? इस बोझ से छुटकारा पाइए। मन के बोझ को हल्का कीजिए और स्वस्थ रहिए।

अजीब संयोग है। उपरोक्त लाइनें लिखने के बाद बिजली चली जाती है, घुप अंधेरा हो गया है लेकिन मुझे पता है टार्च कहां रखी है, हाथ बढ़ाकर टार्च उठाता हूं और प्रकाश की उचित व्यवस्था कर अपना कार्य जारी रखता हूं। कोई परेशानी नहीं, तनाव नहीं, दुविधा नहीं। उपयोगी चीजों को उनके उचित स्थान पर रखिए अन्यथा वे उपयोगी नहीं रहेंगी। बिजली चले जाने की दशा में यदि टार्च और मोमबत्तियां अथवा प्रकाश की व्यवस्था के अन्य वैकल्पिक उपकरण नहीं मिलते तो वे उपयोगी कहां हैं?

अनुपयोगी चीजों को अलविदा कह दीजिए। बेकार की चीजों को कबाड़ी को बेच दीजिए, कुछ पैसे भी मिल जायेंगे अन्यथा ये चीजें आपके मन को कबाड़खाना बना देंगी। कबाड़ी नहीं मिलता तो कूड़े में फिंकवा दीजिए चाहे इसके लिए मजदूरी ही क्यों न देनी पड़े। मन को कबाड़खाना बनने से रोकने के लिए यह सौदा सस्ता है। सोचकर देखिए जो चीज पिछले पांच या दस सालों में एक बार भी प्रयोग नहीं हुई क्या वह कबाड़ नहीं है? क्या भविष्य में उसके प्रयोग की संभावना है?

संभव है आपके बच्चे आपके इस मूर्खतापूर्ण कृत्य के लिए आपका उपहास उड़ाएं। निरर्थक, अनुपयोगी वस्तुओं से मुक्ति पाने के बाद उपयोगी वस्तुओं को व्यवस्थित कीजिए, यथास्थान रखिए। किताबों को किताबों के निश्चित स्थान पर, पेन-पेंसिलों को कलमदान में, जूते-चप्पल शू-रैक पर, जरूरी कागजात उचित फाइलों में.. सूची बहुत लम्बी है लेकिन समाधान संक्षिप्त। चीजों को यथास्थान करीने से रखिए, सही तरीके से रखिए। इससे आपके अंदर, आपके मन में भी कोई चीज संवर जाएगी अर्थात् आपके व्यक्तित्व में एक सुसंगतता पैदा हो जाएगी।

वास्तुशास्त्र का महत्व इसीलिए तो है कि वह हमें बताता है कि कौन-सी वस्तु कहां रखें तथा वह स्थान घर में अथवा कार्यालय में कहां हो। कौन से कार्य घर के अंदर किए जाएं तथा कौन-से घर से बाहर। किन वस्तुओं को सिर से ऊंचे स्थान पर रखें तथा किन को नीचे अथवा घर के बाहरी उपेक्षित स्थानों पर। यह एक पूर्ण वैज्ञानिक पद्धति है, इसकी सहायता लीजिए तथा चीजों को सही स्थान पर रखकर अपने व्यक्तित्व को विकसित कीजिए तथा आरोग्य प्राप्त कीजिए।

घर हो या दफ्तर या कार्य करने का अन्य स्थान बेकार की चीजों के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। हमारे कार्य करने के स्थान पर हमारी आंखों के सामने केवल उपयोगी वस्तुएं ही

होनी चाहिएं। ढेर सारी अव्यवस्थित चीजें काम में रुकावट पैदा करती हैं।

वस्तुओं को सजी-संवरी तथा यथास्थान देखते ही मन में एक संतुष्टि, एक खुशी की लहर दौड़ जाएगी। आशंका, भय, चिंता, क्रोध, तनाव, उदासी, खिन्नता, ग्लानि, विषाद, कुंठा, सुस्ती आदि निराशाजनक स्थितियों की अपेक्षा चुस्ती-फुर्ती, उत्साह, खुशी, विश्वास, प्रेम, करुणा, सहयोग, खुलापन, एकाग्रता, सुसंगतता, आराम आदि आशावादी स्थितियां उत्पन्न होंगी। प्रसन्नता की स्थिति में मन में सकारात्मक विचार उत्पन्न होते हैं जिससे शरीर में एण्डोर्फिन जैसे रसायन उत्पन्न होते हैं जो आपको पुनः प्रसन्नता प्रदान करते हैं और खुश रखते हैं जो स्वास्थ्य तथा आरोग्य की कुंजी है। इन हार्मोंस के मोलिक्यूल्स पूरे शरीर की अरबों-खरबों कोशिकाओं के साथ एक संवाद करते हैं तथा उन्हें उत्साह प्रदान करते हैं। बदले में ये सारी प्रक्रिया आपको रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करती है तथा वर्तमान व्याधियों से मुक्त भी कराती है। इस प्रकार हमारी जीवनशैली का हमारे स्वास्थ्य से सीधा गहरा संबंध है।

बेकार चीजों की तरह बेकार के काम तथा निरर्थक संबंध भी हमारे कीमती समय को नष्ट करते हैं तथा हमारी कार्य कुशलता को बाधित करते हैं और इन सब का प्रभाव पड़ता है हमारे व्यक्तित्व पर। प्रभावशाली व्यक्तित्व का विकास कर जीवन में सफलता पाने के लिए बेकार की चीजों से छुटकारा पाना अनिवार्य है चाहे वे वस्तुएं हों, कार्य हों, संबंध हों अथवा मनोभाव हों। बेकार के मनोभावों से छुटकारा पाने के लिए पुनः अनिवार्य है व्यवस्थित जीवन शैली और व्यवस्थित परिवेश।

इससे दोनों चीजें सिद्ध हो जाती हैं एक तो चीजों को सही रखने की कला द्वारा सफलता प्राप्त करना तथा दूसरे बिगड़ा काम संवार कर सफलता और स्वास्थ्य प्राप्त करना। सफलता की खुशी से वे अधिक स्वस्थ भी हो जाते हैं। अधिक स्वस्थ होंगे तो आगे और अधिक अध्ययन कर सकेंगे, ज्यादा सफलता प्राप्त करेंगे, अधिक खुशी प्राप्त होगी और स्वास्थ्य में असाधारण सकारात्मक परिवर्तन होगा। आरोग्य, अच्छा स्वास्थ्य तथा अच्छा कैरियर इससे बढ़कर और क्या सफलता हो सकती है? वास्तुशास्त्र और फेंगशुई या फंग श्वे वास्तव में मन द्वारा उपचार की ही विधियां हैं।

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा
दिल्ली-110034

गैस की समस्या है तो खाएं लौकी

■ दीपक भारती

हरी सब्जियों में लौकी शायद सबसे जल्दी पकती है। यह और बात है कि आज शहर में जो लौकी हम खरीद रहे हैं, वे बहुत देर में पकती है। कई बार तो वह ठीक से पकती भी नहीं। देर तक पकाने के बाद भी अगर लौकी ठीक से नहीं पकती है तो इसका मतलब है कि उसे इंजेक्शन लगाकर बड़ा किया गया है। लौकी में लगभग 96 प्रतिशत पानी होता है। यानी सलाद में जो काम खीरा करता है, सब्जी में वही काम लौकी करती है।

माना जाता है कि लौकी का जन्म अफ्रीका में हुआ। पहले खाने से ज्यादा इसका इस्तेमाल बर्तन के रूप में किया जाता था। लौकी लंबे आकार के साथ ही कद्दू की तरह गोल आकार में भी पाई जाती है। गोल आकार वाली यह लौकी जब सूख जाती थी तो कभी इसके अंदर के बीज निकालकर इसमें पानी रखा जाता था। आज भी आपने देखा होगा कि गांवों में सूखे हुए कद्दू को काटकर उसके अंदर सूखे हुए बीज रखे जाते हैं। इसके अलावा अंदर से खाली करने के बाद लौकी का वाद्य यंत्र के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता था।

आज यह हमारी खास हरी सब्जी है, जिसे शाकाहारी लोग बेहद पसंद करते हैं। इसे पसंद किए जाने की दो वजहें हैं। पहली यह कि यह जल्दी पक जाती है और दूसरे इसे बनाने में ज्यादा मसालों का इस्तेमाल नहीं करना पड़ता। बीमारी के दौरान जब डॉक्टर किसी को लौकी की सब्जी खाने की सलाह देते हैं तो इसमें केवल नमक मिलाकर बनाया जाता है। गर्मियों में होटलों में इसे चने के साथ मिलाकर बनाया जाता है। हालांकि तब यह काफी मसालेदार होती है। बंगाल में इसे

झींगा के साथ मिलाकर पकाते हैं। इस डिश को लाउ चिंगरी कहते हैं। महाराष्ट्र में लौकी की ऊपरी परत से चटनी बनायी जाती है। चीन में सूप बनाने में इसका इस्तेमाल करते हैं तो जापान में एक तरह के रोल्ड सुशी (जापानी डिश) बनाने में यह काम में लाई जाती है।

लौकी के पांच फायदे

■ लौकी की तासीर ठंड की है। यानी गर्मियों के मौसम में यह आपके पेट के लिए भी काफी अच्छा रहता है।

■ इसमें फाइबर होने की वजह से यह अल्सर, पाइल्स और गैस के रोगियों के लिए काफी फायदेमंद सब्जी है।

■ पेशाब से जुड़ी अनियमितताओं के इलाज में लौकी फायदा करती है। अगर पेशाब करते समय किसी को जलन महसूस होती है तो डॉक्टर उसे लौकी खाने या उसका सूप पीने की सलाह देते हैं।

■ लौकी हमारे लीवर को भी दुरुस्त रखती है। अगर किसी का लीवर संक्रिमत है और ठीक से काम नहीं कर रहा है तो लौकी खाना उसके लिए फायदेमंद होता है।

■ इसमें 96 प्रतिशत पानी होता है। इसमें कैलोरी की मात्रा कम होती है, जिस वजह से इसे आसानी से पचाया जा सकता है।

फायदे के साथ नुकसान भी

कच्चा भोजन तो नुकसानदेह होता ही है। अगर लौकी को भी ठीक से न पकाया जाए और अधपका खाया जाए तो इससे पेट और आंत की बीमारी भी हो सकती है।

IT'S ALL ABOUT YOUR ATTITUDE

Swami Kriyananda

Because the science of yoga deals so much with the awakening of subtle energies, many yoga students imagine the entire process of spiritual evolution to be a mere mechanism. They think by technique alone to find God. A technical age like ours predisposes people to commit such an error.

We have always been somewhat prone to mistake technique for inspiration. Yoga, which approaches the path to salvation more scientifically, offers at the same time a stronger temptation to confuse method with something infinitely more important on the path: right attitude.

Remember, technique is only a vehicle. What good is a car in the hands of a driver who has no idea where he wants to go? And of what use is it to be a technically skilled driver, if one's driving attitudes are anti-social?

The fact that yoga practice accelerates one's spiritual progress only increases the need for right attitude. Socially responsible attitudes are more important for automobile drivers travelling at high speeds.

Concentration on yoga techniques alone, without developing right attitudes, can prove dangerous. For spiritual progress can never be forced, any more than one can force the delicate mechanism of a watch. If nothing else, too technical an approach to yoga practice will strengthen the ego to the point where one's true, divine Self becomes almost hopelessly obscured.

Yoga has as its ultimate goal awakening of Kundalini, the tremendous power that lies dormant at the base of the spine. A forceful awakening of this power, especially by violent breathing exercises and by certain physical postures, but without any corresponding effort to develop spiritual attitudes, can be exceedingly dangerous. The enormous power of Kundalini can actually destroy the nervous system, if the ruling force in its awakening is not devotional aspiration, but an egotistical presumption that the heights of spirituality can be scaled by power alone.

Consider: every time you express pure love, or think high thoughts, or associate attentively with spiritual people, Kundalini is already inspired to send advance emissaries of light upward to the brain. And every time you think selfish, or otherwise darkening thoughts, Kundalini moves downward, drawing light from the brain and leaving the mind a little darker than it was before.

Attitude is everything. One may have right attitude and know nothing of yoga or of meditation, and still reach God, eventually. But without right attitude, lifetimes of yoga practice may develop nothing but spiritual pride, and an outward focus thereby for

one's energies. Look, then, to the saints. But since probably you must mix with worldly people, too, and may have to be more with them than with saints, look to them also. But study the end results of their attitudes. For even in a worldly sense, those attitudes bear the sweetest fruit which spring most purely from an inner source: self-giving, rather than possessive, love; a wish to correct oneself, not others; an inner freedom in every undertaking, and in every human relationship; an impersonal gaze that can enjoy even the world without constant reference to one's own standing with respect to it.

The realised yogi sees in all things the one, divine Self. But the novice yogi needs to cultivate, in addition to a divinely impersonal outlook, a more intimate, devotional attitude towards God. ●

A LOVE THAT IS ALL-CONSUMING

Swami Tejomayananda

Krishna spells out the sure method to attain any goal that you have set for yourself, in the Bhagwad Gita's ninth chapter. He tells Arjuna, "Give you mind wholly to me, be my devotee, worship me, surrender to me. Make me your supreme goal". On the surface it sounds as though Krishna is very demanding. Some may also feel that while Krishna asks us to renounce our ego, by uttering these words he seems to be more egoistic than all of us! But all that Krishna is saying is that if you unite your mind with him you will attain him.

There is nothing egoistic about this shloka; it is just a simple statement of fact - "If you unite your mind in me, you will not stray anywhere else". There are two kinds of goals in life - the ultimate goal and the immediate, specific goal. Each person may have a different goal in life - one may want to be a political leader or a great artist, another might wish to be a scientist or an educationist. The goal can be a time-bound one, long-term or short-term, temporary or permanent. Whenever we want to achieve anything or reach anywhere, sankalpa or focused thought should be there first - what is called manahsankalpaatmakah.

If this wish or thought itself is not there, then there is no question of any further progress. Manmanaa bhava means 'give your thought and mind to me'. In this world, we give many things, in cash or kind, but we never give our mind. Krishna asks, "I want your mind - only your mind, without any reservations". Then he says, "madbhaktah - your heart should also be given to me, all the love that you are capable of, pour unto me". When we love something, it is never a burden to us. If you find a job that you love, you do not have to work a single day of your life, because the work itself turns into joy, it is not labour anymore.

If you work for someone you love, then again the work becomes a joy. People complain that their mind keeps wandering while doing japa, but when it comes to counting money, the mind is very attentive and does not wander, because there is love for money! How can we learn to love God? When you love something or someone, you spend more time with that thing or person. The reverse process is also true - when you start spending time on something like music, you discover subtle joys in it. When you spend time with someone, you develop attachment for that person.

If you spend time with God, you will learn to love Him. When you devote time to God, you realise the joy and that is precisely why people are afraid, for they feel that if they give time, all their time will be taken up! Develop this equation - if you have love, start spending time and when you start spending time, you discover love. When you discover love for God, the rest is a cakewalk. When you love and worship you are ready for sacrifice. You must be ready not only to do anything, but also to give up anything to attain your goal, for, without sacrifice you cannot attain anything. ●

HEALTHY MIND BOOSTS PHYSICAL WELLNESS

Acharya Mahaprajna

Mental health promotes physical health Mental health promotes physical health The reverse is also true The mind and the body are two mutually connected entities However, the mind's influence on the body is deeper than that of the body on the mind Mental health is connected with the feeling of equality Without this feeling the mind cannot be healthy The principle of equality is also the principle of mental health The first principle of mental health is: Know thyself One who does.not know his own strength and weakness cannot be mentally healthy.

We do not know our strength because we are weak and we feel a sense of being wretched We become excited when somebody misbehaves with us because we do not know our weakness In such cases we overlook ourselves and try to find fault with others The second principle of mental health is the willingness to admit one's responsibility for whatever has been done We are not prepared to visualise the consequences of our actions and that is why our mind has no peace It is unhealthy to avoid.responsibility for our actions.

It can lead to mental illness One needs courage to admit his faults A weak mind does not have this courage One should take responsibility for the good as well as bad consequences of one's actions It is the weak who find fault with others They want to save their own skin We generally like to be praised for our good actions but are not prepared to be blamed for the bad consequences of our actions Devotion to truth is the third principle of mental health Truth is experience of the law.governing the universe.

Death is a universal law It has no exception All the prophets and great men of the world met death Nobody is immortal Everyone who is born must die one day Death is, therefore, a truth In the same way karma (action) and tela (time) are also truths One who admits the operation of the laws, which govern nature, is a mentally healthy man Tolerance is the fourth principle of mental health An intolerant man is always miserable Moreover, the behaviour of an intolerant man is always unpredictable If.an intolerant man is meditating and if the fan is stopped, his mind will be upset and his meditation will break.

He who commands tolerance is indifferent to losses and gains Wealth and riches are not lasting Heat and cold, comfort and pain and convenience and inconvenience do not affect the tolerant man They affect those who do not possess the requisite strength to face them Those who have been born and brought up in the midst of difficulties and privations ultimately develop in themselves the spirit of tolerance. The fifth principle of mental health is that we should present ourselves as we are We should.not put up appearances.

Generally people are snobs in their social life and when people see them in their true colours they are put in a quandary Secretiveness creates ill feelings Those who put up appearances not only deceive others, they deceive themselves also They create difficulties for all We try to create false impressions on the minds of others in order to hide our own real state You cannot hide reality for a long time Only he whose mind is weak tries to hide facts On the other hand he whose mind is strong and.sound will always present himself as he is. ●

A PHILOSOPHY OF NON-DUALITY

Swami Ranganathananda

Vedanta as a philosophy of non-duality has no place for an extra-cosmic God or for anything supernatural. Close your eyes, you see Brahmn; open your eyes, you see the same Brahmn in names and forms around you. The Upanishads offer this as the highest truth. Nothing higher than that can be, when you come to unity. That universal unity is what the Indian sages discovered, by investigating the depth dimension of the human being and discovering the infinite, imperishable, and non-dual dimension of what we experience as our Self. Viewed by the senses, it is finite; on penetrating deeper, it reveals its infinite dimension; above the water level, we see the tip of a rock; but below, we realise its immense dimension. That is what you find in the Upanishads as a momentous search and discovery, conveyed in a few crisp and great utterances, known as mahavakyas.

Now, this truth about the One behind the many, the One in the many, is not the product of intellectual speculation, but of actual realisation by sages, both during the time of the Upanishads and in subsequent centuries. These truths have also been verified by a

luminous succession of sages who had the capacity to rise to that level.

About a thousand years after the Upanishads, we had Gautama, who realised this truth. He became Buddha, the enlightened. He achieved jnana or bodhi, the highest jnana the non-dual or advaita jnana. A little over a 1000 years later, he was followed by Sankara. More recently, we had Ramakrishna, Vivekananda, and few others attaining realisation of Atman as the non-dual Brahmn.

Brahmn is of the nature of not only Sat, Being, and Cit, Consciousness, but also of Ananda, Bliss. Sensual joys are only trickles of this infinite bliss of Brahmn, proclaims Vedanta. Says the Brihadarnyaka Upanishad, This is its supreme Bliss. On a particle of this very bliss alone other beings live.

This truth is verified in the life of Sri Ramakrishna in a unique experience of his. When he witnessed in the Dakshineswar temple compound the joy being experienced by a couple of dogs who were together, he saw the bliss of Brahmn through it.

The Self in every one of us is also the Self of the universe. There cannot be two Selves, because it is of the nature of consciousness, which cannot be divided. It is akhanda, says Vedanta. Consciousness is like space, an indivisible whole; by putting up four walls, we do not really divide space. What else can divide consciousness? Consciousness can divide other things, but it remains undivided. As the Gita puts it: "In all these separate divided things of the world, Pure Consciousness is undivided but looks apparently divided. In its fullness, it is there in everything. Vedanta refers to it as Akhanda Sachidananda, undivided Existence, Consciousness, and Bliss.

This truth is corroborated by nuclear physicist Erwin Schrodinger, in an epilogue to What is Life: Consciousness is never experienced in the plural, only in the singular. Consciousness is a singular of which the plural is unknown; that there is only one thing and what seems to be a plurality is merely a series of different aspects of this one thing, produced by a deception, which in India is called Maya. ●

बेटियों के बिना कैसी होगी दुनिया!

■ मैत्रेयी पुष्पा

ज़रा सोचिएए स्त्री-विहीन दुनिया कैसी होगी? इस सवाल को सार्वजनिक करते हुए हम उन आंकड़ों को देख सकते हैं, जो हाल के सर्वेक्षणों से निकल रहे हैं। पुरुष और स्त्री की गिनती में स्त्री वाला पलड़ा हल्का होता जा रहा है, यह संदेश आम लोगों तक सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा पहुंचाया जा रहा है। क्या इस संदेश से भारतीय नागरिकों के कानों पर जूं तक रेंगी? सामने यही नजारा है- भ्रूण हत्या, दहेज दहन या स्त्री हत्या को विभिन्न स्त्री-दोषों से जोड़कर अंजाम दिया जा रहा है।

मेरे खयाल में यह समझने के लिए अब कुछ भी बाकी नहीं बचा कि हमारे समाज में स्त्री का दर्जा क्या है। क्या पशु-पक्षियों को गर्भ में मारा जाता है? क्या उन्हें पैदा होने के तुरंत बाद जिबह कर दिया जाता है? क्या उन्हें डायन या चुड़ैल बताकर हलाक किया जाता है? यदि हमें पशु-पक्षियों से कोई सेवा या आहार प्राप्त करना होता है, तो उन्हें अच्छी से अच्छी खुराक देनी होती है, सुविधाजनक जगह देनी होती है, लेकिन औरत के लिए इसका उलटा नियम चलता है कि खाने, पहनने और रहने की जगह देने में पुरुष व्यवस्था शुरू से ही कोताही करने लगती है। बच्ची गरीब की हो या अमीर की, वह एक बोझ, जिम्मेदारी और परायी अमानत की तरह पिता के घर पलती है। कुदरत की दी हुई लड़की स्त्री-पुरुष के क्रोमोजोम के मिलन का परिणाम है, जिस पर हमारे देशवासियों का बस नहीं। साइंस और टेक्नॉलजी ने जो सुविधा गर्भ में पलने वाले भ्रूण के सामान्य और असामान्य परीक्षण के लिए प्रदान की थी, समाज की पुरुष व्यवस्था उसे लिंग परीक्षण के लिए अलादीन के चिराग के रूप में ले उड़ी। आलम यह है कि परिवार में भले असामान्य बेटा हो जाए, लेकिन सामान्य स्वस्थ लड़की नहीं चाहिए। वैसे इन बातों को हम सभी सच की तरह जानते ही हैं।

लेकिन नहीं जानना चाहते उस सूत्र को, जिससे लड़की को मनुष्य के रूप में इतना हेय माना गया है कि उसका जीना बर्दाश्त के बाहर है। यह गजब की नफरत ही उस पर तब से कहर बनकर टूटने लगती है, जबकि वह गर्भ में हाथ-पांव तक नहीं हिला पाती। मगर वह जिंदा बच जाने की अदम्य शक्ति धारण किए रहती है और पैदा हो जाती है। सच मानिए, औरत बनते ही वह मर्द के आकर्षण का केन्द्र बन जाती है। जिन प्रदेशों में लड़कियों की संख्या का आंकड़ा न्यूनतम अंक दिखा रहा है, औरतें उन्हें भी चाहिए। वे चाहिए सेवा, श्रम और सेक्स के लिए, वंश के लिए, बेटे पैदा करने के वास्ते। ऐसी औरतें खरीदकर लाई जा सकती हैं। ये ही पासा पलटने के मौके हैं और इनसे अर्थशास्त्र का मांग और पूर्ति का सिद्धांत खरीद-बिक्री को प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। समाज में कन्या वध का सिलसिला ऐसे ही जारी रहा तो औरतें सोने के भाव बिकने वाली हैं और उनके रत्ती-रत्ती मांस की कीमत लगा करेगी। इसी आधार पर मैं दावे के साथ कहती हूं कि भारतीय माता-पिता लड़कियों को जन्म देना चालू कर देंगे।

आखिर ऐसे ही तो तमाम कारण हैं कि माता-पिता लड़की के जन्म देने से बचना चाहते हैं। शास्त्रों की रीति-नीति पर चलने वाला हमारा समाज जब साइंस और तकनीक को शास्त्रों में घसीट ले गया, तो रूढ़ियों की महिमा अपने आप साबित होती है। मनुस्मृति कहती है कि कन्या के रजस्वला होने से पहले ही उसे किसी पुरुष को दान कर दिया जाए। कुंआरी कन्या के समर्पण से माता-पिता को स्वर्ग मिलता है। अत: लड़की को पिता जन्म लेते ही शास्त्रों की नजर से देखने लगते हैं। इस बदलते समय में बेशक लड़कियों की शिक्षा का विधान है और उसे आर्थिक निर्भरता के लिए छूट भी दी जाती है (थोड़े ही अनुपात में) लेकिन इस आधुनिक व्यवहार पर शास्त्र और परम्पराएं फिर शिकंजा कसने लगती हैं। मिसाल के तौर पर, बेटी की कमाई खाने वाला पिता नीच अधम के रूप में नरक में जाता है क्योंकि पाप का भागी होता है। समाज जीते जी उसे नीची नजर से देखता है। हमारा मानसिक अनुकूलन (कंडिशनिंग) हमें तर्क की इजाजत नहीं देता कि आखिर ऐसा क्यों होता है? अगर इस विधान की परतें खोली जाएं, तो सच सामने आ जाएगा- क्योंकि पिता कभी भी बेटी की कमाई नहीं खा सकता, इसलिए वह उसका उचित पालन-पोषण क्यों करें? उसे शिक्षा की वैसी ही सुविधा क्यों दे, जैसी बेटे को देता है? पराये घर भेजने के लिए बाध्य पिता अपनी बेटी को जायदाद में से हिस्सा भी क्यों दे? वह विवाह के समय अपनी हैसियत और इज्जत के मुताबिक वर पक्ष को धन-धान्य देता है, जिसे हम दहेज कहते हैं। क्योंकि अब इस लड़की को पति के घर जिंदगी बितानी है, जामाता ने लड़की के पिता का बोझ उतारा है, इसलिए वह पूज्य हुआ। पूज्य व्यक्ति को पिता ने कुंआरी कन्या दी है, यह उसकी अनिवार्य योग्यता है। सच मानिए, इन दोनों पुरुषों के बीच लड़की अपने शरीर से लगे गर्भाशय की अपराधिनी है, जिसको उसे तनी रस्सी पर चलते हुए हर हालत में पवित्र और अनछुआ रखना है। पवित्रता नष्ट होने के शक में उसे मृत्युदंड दिया जा सकता है। कोई गौर नहीं करता कि इस अपवित्रता में एक पुरुष भी शामिल रहा होगा, वह क्यों मुजरिम नहीं है? यह अच्छी रही कि पहले हकों से खारिज करो, फिर खात्मा आप करें या ससुराल वाले करें। तोहमत लगाने के बहाने तमाम हैं।

रूढ़ परम्पराओं के तंबू तले हम बेटी बचाओ के नारे किसके लिए लगा रहे हैं? बेटी हमारी ताकत है, लेकिन संपत्ति का अधिकार न देकर हम किस सशक्तीकरण की बात कर रहे हैं? बेटियों को मारने का ग्राफ तो ऊपर ही चलता जा रहा है। मुझे लगता है कोई भी परिवर्तन तब तक कारगर नहीं होता जब तक कि वह सहज रूप से सामान्य व्यवहार में न आए। पहले हमारा व्यवहार तो बदले। हम अपनी मेंटल कंडिशनिंग से तो आजाद हों। बेटी को सही नजरिए से, बराबरी के नजरिए से जिस दिन हम देखेंगे, यह भयानक संकट दूर हो जाएगा, जो समाज में उथल-पुथल मचा देने वाला है। ●

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

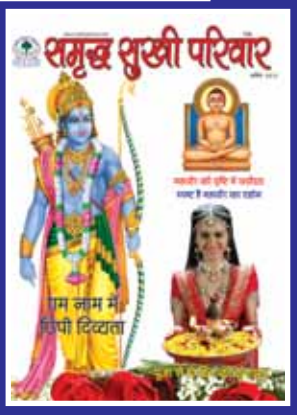

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन-जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई-मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोन: +91-11-26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

मन के रूप हजार

ललित गर्ग

'मन के रूप हजार' सोलह कहानियों और तेरह व्यंग्य का एक ऐसा संकलन है, जो न केवल समसामयिक जीवन की कठोर बल्कि निर्मम सच्चाइयों से रू-ब-रू कराता है। जिसमें रोचकता भी है और कई उलझे-अनसुलझे सवाल भी। जीने का नया नजरिया और जीवन को नये रंग देने की कोशिश करती ये कहानियां हर वर्ग और पाठक के लिए सहज ग्राह्य है। सहज, सरल शब्दों में मानवीय संवेदना और विडम्बनाओं की पुख्ता पड़ताल करता यह संकलन जहां हौसलों की उड़ान है, वहीं मन की छटपटाहट भी है। इन कहानियों से लोगों को एक प्रेरणा मिलती है कि वे मनुष्य जीवन में क्या-क्या श्रेष्ठ कर सकते हैं। लेखक का आदर्शोमुखी चिंतन, संवदेनशील कथ्य एवं स्वस्थ कल्पनालोक कहानियों को जीवंत बनाते हैं और पाठक को पढ़ने के लिए एक विशेष परिवेश प्रदत्त करते हैं। लेखक का स्वयं का जीवन भौतिकता एवं आध्यात्मिकता का एक समन्वित रूप है। जिसमें नैतिकता और चरित्र की स्थापना को सुदृढ़ बनाने का एक अदृश्य आंदोलन चलयमान प्रतीत होता है, उसी का जिक्र इन कहानियों में छोटी-छोटी घटनाओं के माध्यम से खुलता है, लेखक की कोशिश यहां पाठकों को अपनी जानी, देखी, जी गई दुनिया को कुछ ज्यादा संवेदनशील ढंग से देखने और उसमें नये सिरे से सिरकत करने के लिए उकसाना है। दरअसल हम जिस तरह की आपाधापी की दिनचर्या में शामिल रहते हैं, उसमें जो कुछ भी सुंदर और हमारी बुद्धि और हृदय को प्रभावित करने वाली चीजें या घटनाएं हैं, वे अक्सर हमसे छूट जाते हैं।

विषय-वस्तु की दृष्टि से इन कहानियों में कहीं देश की जड़ों में खोखला करने वाले तत्वों को उधेड़ा गया है वहीं नैतिक और चारित्रिक दृष्टि से टूट-बिखर रहे समाज की पीड़ा को वाणी देने का प्रयास किया गया है। समाज में फैली विषमताओं और विसंगतियों के चलनों से आम पाठक को साक्षात कराती ये कहानियां और व्यंग्य हमारे वर्तमान का अक्स प्रस्तुत करती है। सीधी-सरल-सपाट शैली में लिखी कहानियां यथार्थ से जुड़ी कल्पना का कलेवर धारण कर साकार हुई है। संवेदना के धरातल पर बेहद सशक्त ये कहानियां हमें भीतर तक द्रवित करती हैं। लेखन जहां नवीन और पुरातन का संधिस्थल है, वहीं विराट और सोद्देश्यपूर्ण भी है।

पुस्तक : मन के रूप हज़ार
लेखक : जयनारायण गौड़
प्रकाशक: छवि पब्लिकेशन्स
प्रथम मंजिल, 59 कचहरी रोड, अजमेर (राज.)
मूल्य : रु. 300, पृष्ठ सं. : 158

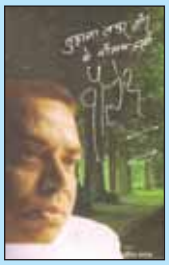

सुहाना सफर और ये मौसम हसीं

बरुण कुमार सिंह

जाने-माने कवि, गीतकार शैलेन्द्र के जीवन से जुड़े तमाम अनछुए पहलू को नलिन सराफ ने 'सुहाना सफ़र और ये मौसम हसीं' कृति के माध्यम से सहेजने का प्रयास किया है।

शैलेन्द्र ने कई प्रसिद्ध संगीतकारों की पहली या आरंभ की फिल्मों के लिए गीत लिखें, जो काफी लोकप्रिय हुए। गायक मन्ना डे ने एक बार स्वीकार किया कि फिल्मों में उनकी सफलता में शैलेन्द्र प्रमुख आधार थे। उनके सहकर्मी गीतकार हसरत जयपुरी का कहना था- ''शैलेन्द्र जैसा हिन्दी फिल्म गीतकार आज तक न कोई हुआ और न कोई होगा। हम सैकड़ों शायर हों, पर हिन्दी गीतकार तो सिर्फ शैलेन्द्र ही था।''

गीतकार शैलेन्द्र सरल व सीधी बात काव्यात्मक रूप से प्रस्तुत करने वाले एक जादूगर थे। भारतीय दर्शन की असीम गहराइयों को बड़े ही सहजभाव से शब्दों में व्यक्त कर देना उनकी असाधारण प्रतिभा का प्रमाण है। हिन्दी फिल्म-जगत सदैव उनका ऋणी रहेगा। पिछले अस्सी साल के फिल्मी संगीत की यात्रा में, गीतकार तो अनेक हुए पर लोक भाषा में दिल की बात दिल से करनेवाले केवल शैलेन्द्र ही हैं।

कुछ प्रमुख गीत/कविताएं इस प्रकार हैं- 'चेहरों का खजाना', 'भोर की हल्की नीली रोशनी', 'जागा सारा संसार', 'क्रांति के लिए उठे कदम', 'इन्कलाब जिंदाबाद', 'आखिरी ये रात है', 'आओ साथ हमारे', 'गोरा परदेसी', 'हम आजादी के दीवाने', 'जलता है पंजाब हमारा', 'कल होगा क्या', 'पिया घर जाना है', 'तुम प्यार से देखो', 'मेरा गीत अधूरा है' आदि प्रमुख हैं। इस कृति के माध्यम से शैलेन्द्र के जीवन से जुड़ी घटनाओं को समेटने का सराहनीय प्रयास किया गया है।

पुस्तक : सुहाना सफ़र और ये मौसम हसीं
संकलन : नलिन सराफ
प्रकाशक : जीवन प्रभात प्रकाशन
ए-209, साईं श्रद्धा, वीरा देसाई मार्ग, मुम्बई-400058
मूल्य : रु. 200, पृष्ठ सं.: 120

श्रेष्ठ सिख कथाएं

ललित गर्ग

साहित्य की सबसे सरस एवं मनोरंजक विधा है- कथा। बहुत विवेचन, विश्लेषण के बाद भी जो अकथ्य रह जाता है, उसे कथा बहुत मार्मिकता से प्रकट कर देती है। अत: प्राचीनकाल से ही कथा के माध्यम से ही गूढ़तम रहस्य को प्रकट करने का प्रयत्न होता रहा है। वेद, उपनिषद्, महाभारत, गुरुवाणी तथा आगमों में आई कथाएं इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

'श्रेष्ठ सिख कथाएं' सुप्रसिद्ध कथाकार एवं स्थापित रचनाकार डॉ. (सुश्री) शरद सिंह का नवीन कथा संग्रह है जिसमें उन्होंने सिख धर्म और धर्मगुरुओं की शिक्षाओं, उपदेशों एवं मार्मिक घटना प्रसंगों को कथा-प्रवाह के माध्यम से प्रस्तुत किया है। भारतीय धर्मों में सिख धर्म का अपना एक पवित्र एवं विशिष्ट स्थान है। सिखों के प्रथम गुरु गुरु नानकदेव से लेकर गुरु गोविंदसिंह तक सभी गुरुओं ने प्रेम, सेवा, परिश्रम, परोपकार और भाईचारे की सीख दी। इन सभी गुरुओं ने तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं, अंधविश्वासों, जर्जर रूढ़ियों, पाखंडों को दूर करते हुए मार्मिक उपदेश दिये और जनआंदोलन किया। सिख धर्म का मानना है कि ईश्वर एक है, उसी ने सबको बनाया है। संसार के सभी धर्म की मूल बातें जानने की जिज्ञासा और उनमें व्याप्त अच्छाइयों को ग्रहण करने की अभीप्सा सिख गुरुओं में सदा रही है।

यह किताब आपको बताती है कि जीवन में किस तरह आदर्श मूल्य मानकों को जीया जा सकता है। किस तरह से छोटे-छोटे बदलाव बड़े काम के साबित हो सकते हैं। जीवन को सफल और सार्थक बनाने का अर्थ बहुत सारा धन, बड़ा घर या ऊंची पदवी पाना ही नहीं बल्कि वह हासिल करना है जो आपके जीवन में महत्व रखता है, जिसे पाकर आपको संतुष्टि और खुशी का अहसास होता है। इसके लिए जरूरी है पुस्तक में वर्णित शिक्षाओं को जीवन का आधार बनाएं। उद्दाम मानवता, बेहतरीन शिल्प से सज्जित ये कहानियां कहानी के रसज्ञ पाठकों के साथ-साथ शोधार्थियों के लिए भी पठनीय है। संग्रह सिख समाज के तात्कालिक परिवेश और संस्कृति की झलक भी प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करता है।

पुस्तक : श्रेष्ठ सिख कथाएं
लेखक : डॉ. (सुश्री) शरद सिंह
प्रकाशक : सुनील साहित्य सदन
3320-21, जटवाड़ा, दरियागंज, नई दिल्ली-2
मूल्य : रु. 250, पृष्ठ सं.: 176

मोटापा सौंदर्य में बाधक

■ डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम

अपने आकर्षण व्यक्तित्व को लेकर सतर्क रहने के बावजूद तमाम ऐसे कारक हैं, जिनको व्यक्ति नजरअंदाज कर जाते हैं। मोटापा भी उन्हीं में से एक है। प्रारंभ में बढ़ते मोटापे पर खयाल नहीं जाता एवं अत्यधिक वृद्धि हो जाने पर इस पर अंकुश रखना कठिन हो जाता है।

शरीर को गति प्रदान करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है तथा हमें यह ऊर्जा शर्करा से मिलती है। शरीर की अनगिनत कोशिकाएं शर्करा को जलाकर ऊर्जा प्राप्त करती हैं। यदि शरीर में आवश्यकता से अधिक शर्करा एकत्र हो जाएं तो काया उसे यकृत (जिगर) में ग्लाइकोजन के रूप में एकत्रित कर लेती है। यह इससे भी अधिक बढ़ जाए तो वसा से संबंधित कोशिकाएं इसे वसा (चर्बी) में परिवर्तित कर देती है, अर्थात् शरीर पर चर्बी जमा होने से मोटापा आने लगता है। मोटापा अपनी छाप सबसे ज्यादा कहीं छोड़ता है तो वे भाग है पेट एवं जांघें। यहां बढ़ती चर्बी जहां एक ओर सौंदर्य को अनाकर्षक बनाती है, वहीं चलने में भी तकलीफ होती है।

खान-पान और व्यायाम पर आधारित तमाम ऐसे तत्व हैं, जिन्हें खयाल में रखकर मोटापे को दूर किया जा सकता है। मोटापा कम करने के लिए चीनी का उपयोग कम करने की सलाह दी

मोटापा अपनी छाप सबसे ज्यादा कहीं छोड़ता है तो वे भाग है पेट एवं जांघें। यहां बढ़ती चर्बी जहां एक ओर सौंदर्य को अनाकर्षक बनाती है, वहीं चलने में भी तकलीफ होती है।

जाती है। भोजन में अधिक तेल-मसाले से एहतियात बरतें। फल तथा हरी साग-सब्जियों का सेवन अधिक करें। तली-भुनी वस्तुएं न खाएं। साथ ही प्रतिदिन व्यायाम करें।

आवश्यकता से अधिक मोटापा सुंदरता तथा आकर्षक व्यक्तित्व का सबसे बड़ा दुश्मन है। वजन को संतुलित किया जा सकता है, बशर्ते यहां दिए गए नुस्खों को अपनाया जाए-

● एक नींबू 250 मिलीलीटर जल में निचोड़कर निराहारमुख पिएं। गर्मियों में दो मास पीने से काया की अतिरिक्त चर्बी दूर होकर हल्की हो जाती है।

● शहद मोटापा दूर करके छरहरा शरीर बनाने में सहायक होता है। मोटापे में शक्कर के स्थान पर शहद ही सेवन करना चाहिए। दो चम्मच शहद एक गिलास गर्म पानी में मिलाकर सबेरे-शाम पीने से मोटापा दूर होता है।

● 25 ग्राम शहद में 25 ग्राम नींबू का रस मिलाकर दिन में तीन मर्तबा पीने से मोटापा दूर करने में मदद मिलती है।

● नियमित रूप से व्यायाम किया जाए तो वजन स्थिर बना रहता है और मांसपेशियां भी विकसित होती हैं। साइकिलिंग, सीढ़ियां चढ़ना-उतरना, रस्सी-कूदना और चहलकदमी भी एक प्रकार का व्यायाम है। इससे वजन घटाने या संतुलित रखने में मदद मिलती है।

● दही से शरीर की फालतू चर्बी कम होती है। इसलिए मोटापा कम करने के लिए दही का सेवन बहुत उपयोगी है। दही का पानी अथवा मट्ठा केवल पीने से शरीर दुबला होता है।

● 12 ग्राम मूली के चूर्ण में बराबर मात्रा में शहद मिलाकर पानी के साथ सेवन से 40 दिन में मोटापा का शमन होता है।

-जन शिक्षण इंटर कॉलेज,
प्रेमपुर-बड़ागांव
कानपुर नगर-208101 (उ.प्र.)

दैनिक जीवन में सरल उपयोगी टोटके

■ मुरली कांठेड़

■ जिस व्यक्ति के बच्चे जीवित नहीं रहते हों, उसे चाहिए कि जब भी घर में बच्चा जन्म लें तो उस खुशी के अवसर पर मिठाई के स्थान पर नमकीन चीजें अपने रिश्तेदारों व मित्रों को खिलाएं।

■ बच्चे जन्म लेकर मरते हो तो जन्म लेने से पांच वर्ष तक बच्चे को पुराने कपड़े पहनाएं, बाल न कटवाएं तथा उसके जन्म वाले नाम से न पुकारें।

■ यदि व्यवसाय में कुछ कमी महसूस कर रहे हों तो अमावस्या की संध्या को हाथ में एक सुपारी व तांबे का सिक्का ले जाकर पीपल के पेड़ के नीचे रख दें। आने वाले सोमवार को उसी पीपल का एक पत्ता लाकर अपनी दुकान के मुख्य काउंटर के पास रख दें। ग्राहकों में वृद्धि के साथ-साथ व्यापार भी बढ़ेगा।

■ शनिवार के दिन आठ पान के पत्ते और पांच पीपल के पत्ते लेकर लाल धागे में बांधकर व्यवसाय स्थल पर पूर्व दिशा में बांधने से व्यापार सुचारुरूप से चलता है।

■ शुक्ल पक्ष के गुरुवार को पुराना ताला बिना चाबी वाला लेकर कन्या घड़ी के विपरीत दिशा में सात बार शरीर से वार कर शाम को चौराहे पर बिना पीछे देखे गिरा दे तो मनपसंद व्यक्ति से विवाह होता है।

■ दशहरे के दिन कचनार के पत्तों का यदि प्रेमी-प्रेमिका आपस में लेन-देन करे तो उनके आपसी प्रेम प्रगाढ़ होंगे।

■ विवाह के बाद सर्वप्रथम आप पत्नी को कोई सफेद रंग की वस्तु का उपहार अवश्य दें। इस उपाय से वह आपके विरोध में नहीं आएगी और आपस में प्रेम की वृद्धि होगी।

■ सूर्य के कारण संतान सुख में बाधा है तो सात अनाज मिलाकर चींचियों को खिलाना चाहिए।

■ यदि मंगल के कारण संतान सुख में बाधा आ रही है तो भिखारियों को नए गुड़ का दान करें।

■ यदि बुध के कारण संतान सुख में कमी हो तो घर के पूजा घर में गंगाजल रखना चाहिए।

■ यदि गुरु के कारण संतान सुख में कमी हो तो सफेद और सुगंधित पुष्प बहते हुए पानी में प्रवाहित करें।

■ यदि शनि के कारण संतान सुख में कमी हो तो काले तिल, काले कपड़े में बांधकर भूमि में दबाना चाहिए।

■ यदि केतु के कारण संतान सुख में बाधा आ रही है तो दो रंग का कंबल दान करें।

■ राहु के प्रभाव से संतान सुख में कमी है तो नागपंचमी के दिन नाग को जंगल में छोड़ देना चाहिए।

■ यदि आप लम्बे समय से सर्दी-जुकाम की समस्या से पीड़ित हैं तो प्रत्येक सोमवार को थोड़ा कच्चा चावल का दान करें।

■ यदि आप वायु संबंधित विकारों से ग्रस्त हैं तो सात शनिवार भूरे रंग की गाय अथवा किसी भी रंग के सांड को गुड़ खिलाएं।

-ए-56/ए, प्रथत तल
लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-24

संस्कार हैं हमारी जीवनी शक्ति

■ अशोक एस. कोठारी

समाज में सुखी गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए सहिष्णुता, समर्पण एवं सह-अस्तित्व की भावना की बहुत जरूरत है, अपेक्षा है, जिनकी आज बहुत कमी होती जा रही हैं। सहन करना जानते ही नहीं हैं। पत्नी हो, मां-बेटे, मां-बेटी, भाई-भाई, भाई-बहन, सास-बहू, गुरु-शिष्य कहने का अर्थ है कि प्राय: सभी में सहन करने की शक्ति की कमी हो गई है, समर्पण भावना लुप्त है, सह-जीवन दुर्भर होता जा रहा हैं।

एक व्यक्ति अपने भाई को सहन नहीं करता, माता-पिता को सहन नहीं करता और पड़ोसी को सहन कर लेता है, अपने मित्र को सहन कर लेता है। यह प्रकृति की विचित्रता है। सहन करना अच्छी बात है। लेकिन घर में भी एक सीमा तक एक-दूसरे को सहन करना चाहिए, तभी छोटी-छोटी बातों को लेकर मनमुटाव व नित्य झगड़े नहीं होंगे।

इन्सान की पहचान उसके संस्कारों से बनती है। संस्कार उसके समूचे व्यक्तित्व को व्याख्यायित करते हैं। संस्कार हमारी जीवनी शक्ति है, यह एक निरंतर जलने वाली ऐसी दीपशिखा है जो जीवन के अंधेरे मोड़ों पर भी प्रकाश की किरणें बिछा देती है। उच्च संस्कार ही मानव को महामानव बनाते हैं। सद्संस्कार उत्कृष्ट अमूल्य सम्पदा है जिसके आगे संसार की धन दौलत का कुछ भी मौल नहीं है। सद्संस्कार मनुष्य की अमूल्य धरोहर है, मनुष्य के पास यही एक ऐसा धन है जो व्यक्ति को इज्जत से जीना सिखाता है। इन्हीं संस्कारों को सुदृढ़ बनाने, पारिवारिक संरचना को मजबूती देने और समाज को आदर्श शक्ल देने के लिये ही गणि राजेन्द्र विजयजी के नेतृत्व में सुखी परिवार अभियान संचालित किया जा रहा है।

कुछ लोग ऐसे हैं जो घोर स्वार्थ-भावना के वशीभूत होकर संवेदनाशून्य होते जा रहे हैं। जहाँ प्रेम एवं करुणा की धारा बहती थी, वहाँ मनोविकारों का शोर सुनाई पड़ रहा है। मानवता कहीं घायल पड़ी है और शांति धूल चाट रही है। यह वे निशान हैं जो आतंकवाद, नक्सलवाद, माओवाद आदि के फलने-फूलने से बने हैं। आवश्यकता है मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की, आवश्यकता है हिंसा के प्रतिकार की, आवश्यकता है अहिंसा की चेतना का समाज में जागरण करने की। इन समस्त प्रयासों को लेकर गणि राजेन्द्र विजयजी निरंतर पदयात्रा कर रहे हैं, जनता को प्रबोध दे रहे हैं और राष्ट्र में शांति एवं सौहार्द कायम करने का प्रयास कर रहे हैं। विगत चार माह से वे आदिवासी जन-जीवन के बीच अपने समाज निर्माण के प्रयत्नों को लेकर सक्रिय

इंसान की पहचान उसके संस्कारों से बनती है। संस्कार उसके समूचे व्यक्तित्व को व्याख्यायित करते हैं। संस्कार हमारी जीवनी-शक्ति है, यह एक निरंतर जलने वाली ऐसी दीपशिखा है जो जीवन के अंधेरे मोड़ों पर भी प्रकाश की किरणें बिठा देती है।

है, विशेषत: जातिवाद, साम्प्रदायिक कट्टरता, धार्मिक विद्वेष एवं पारिवारिक टूटन की स्थितियों को समाप्त करने के लिये उन्होंने व्यापक प्रयत्न किये है। उनके प्रयत्नों से आदिवासी समाज की तस्वीर बदली है, उनमें विश्वास जागा है और वे समाज को उन्नत एवं स्वस्थ बनाने के प्रयासों में जुटें है। आदिवासी अंचल में एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय के सपनें को उन्होंने साकार कर दिखाया है और इस विद्यालय के माध्यम से वे बच्चों को आदर्श सांचे में ढ़ाल रहे हैं।

वास्तव में बच्चे तो कच्चे घड़े के समान होते हैं उन्हें आप जैसे आकार में ढालेंगे वे उसी आकार में ढल जाएंगे। मां के उच्च संस्कार बच्चों के संस्कार निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि सबसे पहले परिवार संस्कारवान बने, माता-पिता संस्कारवान बने, तभी बच्चे संस्कारवान चरित्रवान बनकर घर की, परिवार की प्रतिष्ठा को बढ़ा सकेंगे। अगर बच्चे सत्पथ से भटक जाएंगे तो उनका जीवन अंधकार के उस गहन गर्त में चला जाएगा जहां से पुन: निकलना बहुत मुश्किल हो जाएगा।

असल में पूरा विश्व आज एक बाजार बन गया है। चालाक आदमी ने स्त्री को भी बाजार बना दिया। यद्यपि ऐसी महिमाशाली महिलाओं की भी कमी नहीं है जिन्होंने अपनी कुशलता से हर क्षेत्र में सफलता के परचम फहराये हैं। पर ऐसी मूढ़ दृष्टि वाली स्त्रियां आज अधिक हैं जिनको चालाक आदमी ने इस तरह बाजार में परोसना शुरू कर दिया है कि वे इस चाल को समझ ही नहीं पाती हैं। स्त्रियां आज इस तरह बिकाऊ हो गई हैं कि अपने गौरव को समझ ही नहीं पाती। मीडिया माध्यम पैसे के लोभ में स्त्रियों को खुले में बेच रहा है। अखबारों तथा टेलीविजन पर स्त्रियों को जिस तरह से दिखाया जा रहा है उससे आम आदमी का नुकसान तो होता ही है पर औरत भी असामाजिक बनकर अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मार रही है। भले ही अपनी दृष्टि में वे अपने आपको मॉडर्न और कमाऊ क्यों न मानती हो, पर अंतत: उनके बुरे परिणाम उन्हें स्वयं ही भोगने पड़ते हैं। मीडिया स्त्रियों को ही नहीं, धर्म को भी बेचने से बाज नहीं आ रहा है। निर्मल बाबाओं की तिजोरियों से निकल रहा अकूत धन धर्म को बाजारु बना रहा है और मीडिया की इसमें अहम् भूमिका है।

एक समय था जब भारत में चरित्र को अधिक महत्व दिया जाता था। सौ वर्ष पहले प्रथम विश्वधर्म सभा में स्वामी विवेकानंद अमेरिका गये हुए थे। वहां उनके कपड़ों को देखकर कुछ अंग्रेज महिलाओं ने उन पर व्यंग्य किया। स्वामीजी ने शांतिपूर्वक उनकी बात सुनते हुए सहज उत्तर दिया-बहनों! आप उस देश में रहती हैं जहां आदमी की कीमत कपड़ों से आंकी जाती है, पर मैं एक ऐसे देश से आया हूं जहां आदमी की कीमत उसके कपड़ों से नहीं अपितु उसके चरित्र से होती है।

सचमुच आदमी की इज्जत कपड़े नहीं होते। बाहर की चमक-दमक भी आदमी की इज्जत नहीं है। आज की भोगवादी संस्कृति ने उपभोक्तावाद को जिस तरह से बढ़ावा दिया है उससे बाहरी चमक-दमक से ही आदमी को पहचाना जाता है। यह बड़ा भयानक है। उससे ही अपसांस्कृतिक मूल्यों को बढ़ावा मिलता है। वही आदमी श्रेष्ठ है जो संस्कृति को शालीन बनाये। वही औरत शालीन है जो परिवार को इज्जतदार बनाये। परिवार इज्जतदार बनता है तभी सांस्कृतिक मूल्यों का विकास होता है। उसी से कल्याणकारी मानव संस्कृति का निर्माण हो सकता है और इसी प्रयास में गणि राजेन्द्र विजयजी संलग्न है। इसी में मानवता के अभ्युदय का उजला भविष्य निहित है। ●

L.M.G. ENGINEERING COMPANY

Manufacturers and Exporters of:
LIVE BRAND [ISI] MARKED HOT GALVANISED MALLEABLE PIPE FITTINGS & SCAFFOLDINGS
B-23 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

LIVE **IDOL** **IDEAL** **LIFE**

SUPREME METAL INDUSTRIES
THE MAHAVIR VALVES INDUSTRIES

NIRMAL KUMAR JAIN	+91–9888005336
SANJIV JAIN	+91–9815199268
PRASHANT JAIN	+91–9815101168

RESIDANCE: 267, ADARSH NAGAR, JALANDHAR

Manufacturers and Exporters of:
LIFE & IDEAL BRAND [ISI] MARKED GUNMETAL AND BRASS VALVES AND COCKS
C-71 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
June 2012

SHREE AADINATH TRADING COMPANY

BLACK DIAMOND MOVERS

COAL CONSULTANTS, COAL CO ORDINATORS, COAL MERCHANTS ,COAL HANDLING AGENTS

HIGHLIGHTS

- Leading Coal Handling Agents and Coordinators since 45 years.
- Complete Coal Solutions under one Roof.
- Handling bulk Coal requirements of Power Plants, Iron and Steel Plants and Paper Mills from the various subsidiaries of Coal India Ltd.
- Expertise in Coal Linkage from Ministry of Coal and Coal India Ltd.
- Expertise in Rake Loading/Unloading and Liasioning.

JAIN GROUP

Branches: Assam, Madhya Pradesh
Maharashtra, Uttar Pradesh
Uttarakhand, West Bengal
Jharkhand

CONTACT DETAILS:
Address – BJ 63, Ground Floor, Sec-2,
Salt Lake, Kolkata. (W.B)
Contact Person:
Amit Jain- +91 9412702749
Ankit Jain- +91 9830773397
blackdiamondmovers@gmail.com

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092